॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥



॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः॥

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ

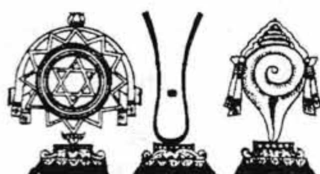
श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय
एवं
श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ



श्रीनिम्बार्काचार्यपीठस्थ पूर्वाचार्यों के समाधिस्थल का अनुपम दर्शन

श्रीनिम्बार्क

* श्रीसर्वेश्वरो जयति *



॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय

एवं

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ-परिचय

सम्पादकः--

पं० श्रीगोविन्ददास ('सन्त') निम्बार्कभूषण

धर्मशास्त्री, द्वैताद्वैतविशारद, पुराणतीर्थ

प्रकाशक--

अखिलभारतीय-श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ-शिक्षासमिति

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद), पुष्करक्षेत्र

किशनगढ, जि० अजमेर (राजस्थान)

चतुर्थावृत्ति ३००० | वि० सं० २०६५ श्रीनिम्बार्काब्द ५१०४ | न्यौछावर ४०) रु०

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्री श्रीजी

श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज

का

आशीर्वचन

वैष्णव चतुः सम्प्रदायों में श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय अपना विशिष्ट महत्व रखता है । यह सम्प्रदाय अत्यन्त प्राचीन है । न केवल वैष्णव सम्प्रदायों अपितु शैव सम्प्रदाय प्रवर्तक जगद्गुरु आद्य श्रीशङ्कराचार्यजी से भी यह पूर्व-वर्ती सम्प्रदाय है । अनेक शोधकर्ताओं ने सप्रमाण इसकी प्राचीनता का उल्लेख अपने शोध ग्रन्थों में किया है ।

सुदर्शनचक्रावतार आद्याचार्य प्रवर श्रीनिम्बार्क भगवान् का आविर्भाव द्वापरान्त एवं कलियुग का प्रारम्भिक काल है । आप दक्षिण भारत में पैठण निकटवर्ती मूंगी ग्रामस्थ गोदावरी के सुरम्य तट पर अति सुशोभित महर्षि श्रीअरुण के आश्रम में माता श्रीजयन्ती के यहाँ नियमानन्द के रूप में प्रकट हुये और उत्तर भारत के व्रजभूमि गोवर्धन के सन्निकट निम्बग्राम में आपने भगवान् श्रीसर्वेश्वर की आराधना करते हुये दीर्घकाल तक तपश्चर्या की । निम्बग्राम आपकी तपःस्थली है । यहाँ पर जगत्स्रष्टा श्रीब्रह्मा ने आपके आश्रम में दिवाभोजी यति रूप में सूर्यास्त के समय प्रवेश किया समागत अतिथि का सूर्यास्त होने पर भी सूर्यवत् श्रीसुदर्शन चक्रराज के दर्शन कराके भगवत्प्रसाद से यति रूप-ब्रह्मा का आतिथ्य किया इसीसे श्रीब्रह्माजी ने अपने यथार्थ स्वरूप में प्रकट हो आपको नियमानन्द से निम्बार्क नाम-रूप से सम्बोधित किया । दार्शनिक सिद्धान्त स्वाभाविक-द्वैताद्वैत एवं भगवान् श्रीराधाकृष्ण की रसमयी उपासना ही आपका सर्वस्व है । सम्प्रदाय की परम्परा श्रीहंस भगवान् से प्रारम्भ होती है। श्रीसनकादिक महर्षियों द्वारा उपदेश देवर्षिवर्य श्रीनारदजी को एवं इनके द्वारा भगवान् श्रीनिम्बार्क को हुआ । श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा भी उक्त महर्षियों एवं देवर्षि द्वारा परम्परया श्रीनिम्बार्क भगवान् को प्राप्त हुई । प्रस्थान त्रयी पर श्रीनिम्बार्क भगवान् ने भाष्य की रचना की । आपके ही कृपापात्र श्रीनिवासाचार्यजी ने आपके वृत्त्यात्मक भाष्य का और विस्तार किया ।

इस सम्प्रदाय के पूर्वाचार्य व्रज में ही निवास करते आये हैं । यवन शासन काल में आचार्यप्रवर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज की आज्ञानुसार आचार्यवर्य श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज ने अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ की स्थापना पन्द्रहवीं शताब्दि में पुष्कर क्षेत्रान्तर्गत निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में की जो अद्यावधि अपने प्रकाश पुञ्ज से आलोकित है ।

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ का संक्षिप्त परिचय का पीठ के ही प्रचार मन्त्री विद्वद्वरेण्य स्व० पं० श्रीगोविन्ददासजी सन्त ने लगभग २० वर्ष पूर्व आलेखन कर प्रकाशन कराया था अब पुनः भक्तों के हितार्थ प्रकाशित किया जा रहा है जिससे भावुकजन अवश्य ही लाभान्वित होंगे ।



* श्रीनिम्बार्कवेदान्त परिचय *

श्रीहरिप्रियायुध सुदर्शनचक्रावतार आद्याचार्य अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्क ने लोक में जिस मत की संस्थापना की है, उसका नाम है--द्वैताद्वैत सिद्धान्त आपने बादरायण (व्यासमुनि) कृत ब्रह्मसूत्रों पर भाष्य किया है , उसका नाम है--वेदान्तपारिजात सौरभ ।

इसके पश्चात् आपके शिष्य श्रीपाञ्चजन्य शंखावतार भाष्यकार जगद्गुरु श्री श्रीनिवासाचार्यजी महाराज ने इसी को विस्तृत रूप देकर ब्रह्म सूत्रों पर जिस भाष्य की रचना की वह वेदान्त कौस्तुभ के नाम से सुप्रसिद्ध है ।

तदनन्तर आचार्यप्रवर श्रीविलासाचार्यजी महाराज ने भी सविशेष निर्विशेष श्रीकृष्णस्तवराज की वेदान्त दर्शन पर रचना की ।

तदनन्तर श्रीनिम्बार्क भगवान् से चतुर्थ परम्परा में होने वाले आचार्य विवरणकार श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी महाराज ने श्रीनिम्बार्क भगवान् कृत वेदान्त दशश्लोकी नामक ग्रन्थ पर विस्तृत व्याख्या की है उसका नाम है- वेदान्तरत्नमञ्जूषा ।

पश्चात् श्रीनिम्बार्क भगवान् से १३ वीं पीठिका में विराजमान जाह्नवीकार श्रीदेवाचार्यजी महाराज ने वेदान्त पर जाह्नवी नामक भाष्य की रचना की है ।

तत्पश्चात् श्रीदेवाचार्यजी महाराज के ही शिष्य सेतुकाकार श्रीसुन्दर-भट्टाचार्यजी महाराज ने श्रीदेवाचार्य कृत जाह्नवी पर सेतु नामक व्याख्या की है ।

तदनन्तर श्रीनिम्बार्क भगवान् से ३० वीं परम्परा में जगद्विजयी प्रस्थानत्रयी भाष्यकार श्रीकेशवकाश्मीरिभट्टाचार्यजी महाराज ने ब्रह्मसूत्र, उपनिषद् और गीता इस प्रस्थानत्रयी पर अपने विस्तृत व्याख्या रूप भाष्य की रचना की वह वेदान्त कौस्तुभ प्रभा के नाम से सुविख्यात है ।

आगे चलकर रसिक राजराजेश्वर जगद्गुरु महावाणीकार श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ने भी श्रीभगवन्निम्बार्काचार्य प्रणीत वेदान्त कामधेनु दशश्लोकी पर सिद्धान्त रत्नाञ्जलि नामक ग्रन्थ में भी वेदान्त दर्शन पर विस्तृत विचार किया है । इनके द्वारा निर्मित महावाणी के सिद्धान्त सुख में भी वेदान्त दर्शन पर विचार है ।

व्रजभाषा की आदिवाणी श्रीयुगलशतक के प्रणेताश्री श्रीभट्टदेवा-चार्यजी के पश्चात् श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी, श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी, श्री-

वृन्दावनदेवाचार्यजी, श्रीगोविन्ददेवाचार्यजी, श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी, श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी, श्रीनिम्बार्कशरणदेवाचार्यजी, श्रीव्रजराज-शरणदेवाचार्यजी प्रभृति आचार्यचरणों ने भी स्वनिर्मित वाणी ग्रन्थों द्वारा वेदान्त व उपासना तत्त्व आदि पर निम्बार्क दर्शन पर विवेचन किया है ।

इनके अतिरिक्त श्रीनिम्बार्क भगवान् के अन्यतम शिष्य श्रीऔदुम्बराचार्यजी तथा आपके अनन्तर परवर्ती महासुधीप्रवरों में श्रीमाधव मुकुन्ददेव, श्रीशुकसुधी, श्रीअनन्तरामजी, श्रीधनीराजी, श्रीगिरधारीदासजी, श्रीपुरुषोत्तमप्रसादजी, श्रीगिरधरप्रपन्न, श्रीरामचन्द्रजी, व्रजविदेही श्रीमहान्त स्वामी श्रीसन्तदासजी महाराज (काठिया), व्रजविदेही श्रीमहान्त स्वामी श्रीधनञ्जयदासजी महाराज (काठिया), श्रीअमोलकरामजी शास्त्री, श्रीवैष्णवदासजी शास्त्री, श्रीदुलारे-प्रसादजी शास्त्री (श्रीहरिप्रियाशरणजी महाराज) पं० श्रीकिशोरीदासजी वेदान्त निधि, पं० श्रीभागीरथजी झा न्याय वेदान्ताचार्य, श्रीलाडिलीशरणजी ब्रह्मचारी काव्यतीर्थ प्रभृति महानुभावों ने भी स्वनिर्मित ग्रन्थों द्वारा श्रीनिम्बार्क वेदान्त दर्शन तथा श्रीनिम्बार्क साहित्य की अपूर्व सेवा की है ।

भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यजी
का
दार्शनिक-सिद्धान्त और उपासना-तत्त्व

सिद्धान्त--

१-श्रीनिम्बार्क सिद्धान्त में तत्त्वत्रय (ब्रह्म-जीव और प्रकृति ये तीनों तत्त्व) अनादि और अनन्त माने गये हैं, ब्रह्म स्वतन्त्र हैं, जीव और प्रकृति, सदा सर्वदा ब्रह्म के अधीन हैं । किसी भी अवस्था में स्वतन्त्र नहीं ।

२-वद्ध-(संसारी) वद्ध मुक्त (भगवद्भक्ति द्वारा मुक्ति प्राप्त) नित्य मुक्त (जो कभी भी माया के बन्धन में नहीं फँसे) जीवों के ये संक्षिप्त रूप से तीन भेद हैं ।

३-समस्त चराचर जगत् ब्रह्म का अंश एवं-परा परात्मिका प्रकृति (शक्ति) होने के कारण सत्य है । इसलिए किसी भी प्राणी को दुःख पहुँचाना या उसके साथ विद्वेष, ईश्वर को ही दुःख पहुँचाना एवं उसके साथ ही विद्वेष करना है । जड़ वस्तुओं का भी दुरुपयोग करना निषिद्ध है, शास्त्र की आज्ञानुसार अचेतन तत्त्व में भी समादरणीय भाव रखना आवश्यक है ।

४-स्वाभाविक भेदाभेद (द्वैताद्वैत, भिन्नाभिन्न) सिद्धान्त का भी

यही रहस्य है, अर्थात् जीव रूप से चराचरात्मक विश्व-ब्रह्म से भिन्न है किन्तु उसका अंश एवं शक्ति होने के कारण स्वभावतः अपृथक् सिद्ध अभिन्न भी है। यही स्वाभाविक भेदाभेद है।

५-जब जगत् के किसी भी अंश को मिथ्या मानना भूल है तब प्रकृति और उसके कार्य रूप बन्धनादि भी मिथ्या कैसे कहे जा सकते हैं, हाँ सच्चे बन्धन की निवृत्ति होती है।

६-बन्धननिवृत्ति-एवं-भगवद्भावापत्ति रूप मुक्ति भगवत् कृपा से ही होती है।

७-श्रुति स्मृति आदि शास्त्र और आचार्य वाक्यों के किसी भी अंश में अप्रमाण्य नहीं है, तात्पर्यानुसार इनके बलाबल की व्यवस्था गम्भीर उहापोह पूर्वक आचार्यों ने की है उस पर आरुढ रहना चाहिए।

८-जीव प्रतिबिम्ब नहीं, न प्राकृतिक जगत् मिथ्या ही है, अतएव सर्वथा ब्रह्म से भिन्न भी नहीं, श्रीनिम्बार्क के सिद्धान्तानुसार तत्त्वमस्यादि महावाक्यों का यही तात्पर्य है। केवल परिणामी होने के कारण मिथ्या और विनश्वर आदि शब्दों से जगत् का निर्देश किया गया है। अल्पज्ञ, अल्पशक्ति-जीव और परिणामी शील होने के कारण जड़ तत्त्व ये दोनों तत्त्व रस एक कूटस्थ ब्रह्म से सर्वथा अभिन्न भी नहीं हो सकते। अतएव भेद और अभेद दोनों ही स्वाभाविक हैं।

९-श्रीनिम्बार्काचार्य के वास्तविक भेदा-भेद सिद्धान्त के अनुसार-

१. उपास्य (ईश्वर) २. उपासक (जीव) ३. कृपाफल, भक्तिरस विरोधी तत्त्व (प्रकृति और प्रकृति के कार्यादि) ये पांचों वस्तु जानने के योग्य हैं। इन सबके ज्ञाता को ही पूर्णब्रह्मविद् कहा जाता है।

उपासना तत्त्व--

१-दार्शनिक सिद्धान्त के अनुसार विश्व और विश्वम्भर के स्वरूप को जानकर विश्व की हित कामना के साथ विश्वम्भर श्रीसर्वेश्वर की उपासक उपासना करें--उस उपासना के पञ्चविध अनुष्ठान ये हैं---

(क) अभिगमन (ख) उपादान (ग) इज्या (घ) अध्ययन (ङ) योग।

विवरणः--(क) श्रीगुरुदेव के आश्रित होकर भगवत् शरणागत होना (वैष्णवी दीक्षा पञ्च संस्कार पूर्वक भगवान् के मन्त्रों की प्राप्ति करना।

(ख) भगवान् की पूजा सेवा की सौंज सामग्रियों का संचय करना।

(ग) प्रातः (मंगला) पूर्वाह्न (श्रृङ्गार) मध्याह्न (राजभोगादि)

उत्तराह्न और सायं, (उत्थापन सायं सेवादि) रात्रि (शयन भोगादि) ये पञ्चकाल सेवायें हैं ।

(घ) वेद उपनिषद्-भागवत-गीता, रामायणादि का अध्ययन कर उनका मनन करना ।

(ड.) भगवान् की शयन पर्यन्त सेवा करके, उपासक स्वयं शयन करते समय मन, बुद्धि, चित्त और समस्त इन्द्रियों की वृत्तियों को एवं आत्मा-आत्मीय सर्वस्व को भगवान् के अर्पण करें, यही योग है ।

(२) उपरोक्त पञ्चकालानुष्ठान के ही अन्तर्गत-श्रवण कीर्तनादि नवधा भक्ति का समावेश हो जाता है ।

(३) इन्द्रादि समस्त देव और श्रीनृसिंहादि समस्त अवतारों का अंगी मानकर श्रीराधासर्वेश्वर भगवान् की अनन्य आराधना करनी चाहिये ।

(४) उपासना में प्रथम अंग (अभिगमन) के अन्तर्गत, तापः अधिकारानुसार शंख चक्रादि की तप्त या शीतलमुद्रा, (छाप) धारण करना।

गोपीचन्दन के ललाटादि स्थानों में ऊर्ध्व पुण्ड्र (तिलक) तुलसी की कण्ठी एवं माला तथा भगवत्सम्बन्धी नाम और मन्त्र उसके न्यासध्यानादि अनुष्ठानों के विधानों को गुरुदेव से प्राप्त कर लेना आवश्यक है ।

(५) भगवान् की भाँति ही मन्त्रोपदेष्टा गुरुदेव पूजनीय हैं । उपर्युक्त उपासना में भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्य ने पुरुषों की भाँति सधवा विधवा सभी पतिव्रता स्त्रियों का अधिकार भी निश्चित किया है । अतएव इस उपासना में सभी वर्ण और सभी आश्रमों के आबाल-वृद्ध सभी नरनारियों का अधिकारानुसार पूर्ण अधिकार है ।



व्रतोपवासादि के सम्बन्ध में--

श्रीनिम्बार्क सम्मत कपालवेध

प्रस्तुत ग्रन्थ में भगवान् श्रीनिम्बार्क का आविर्भाव, सिद्धान्त एवं उपासना तत्त्व आदि का तो संक्षेप में वर्णन हो ही गया है, अब व्रतोपवासादि के सम्बन्ध में संक्षिप्त रूप से वर्णन किया जा रहा है--*

उदयव्यापिनी ग्राह्या कुले तिथिरुपोषणे ।
निम्बार्को भगवानेष वाञ्छितार्थ प्रदायकः ।।

(भविष्य पुराण)

श्रीहरिप्रियायुधचक्रसुदर्शनावतार आद्याचार्य जगद्गुरु सर्व सिद्धिप्रद भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यजी ने कहा है कि हमारी परम्परा में उदय व्यापिनी तिथि ही ग्राह्य है ।

स्पर्श, सङ्ग, शल्य और वेध इन चतुर्विध वेधों में प्रथम स्पर्श वेध को ही श्रीनिम्बार्क भगवान् ने स्वीकार किया है । उन्होंने प्रत्येक एकादशी एवं भगवद्भागवतज्जयन्तियों में तिथि का उदयकाल अर्द्धरात्र (४५ घटी) के ऊपर ही माना है । उनके मत में दशमी यदि पल मात्र भी अर्द्धरात्र (४५घटी) के ऊपर हो तो एकादशी में व्रत न करके द्वादशी में करना कहा गया है । जैसे--

अर्द्धरात्रमतिक्रम्य दशमी दृश्यते यदि ।
तदा ह्येकादशीं त्यक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत् ।।

(कूर्म पुराण)

जो अर्द्धरात्र का अतिक्रमण (उल्लंघन) कर अर्थात् ४५ घटी के उपरान्त दशमी दीख पड़े तो निश्चय एकादशी को छोड़कर द्वादशी में ही व्रत करना चाहिये ।

तात्पर्य यह है कि ४५ घटी के उपरान्त दशमी हो तो वह आगामी एकादशी तिथि का स्पर्श कर लेती है । इस कारण इस वेध का नाम स्पर्श वेध है ।

---

* जिन महानुभावों को इस सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त करना हो उन्हें श्रीनिम्बार्क-ग्रन्थमाला का ११ वाँ पुष्प व्रतोपवास निर्णय देखना चाहिये ।

विद्धा और शुद्धा इस प्रकार एकादशी के दो भेद हैं । प्रत्येक तिथि का सम्बन्ध पूर्व या पर इन दोनों तिथियों में से किसी एक के साथ तो होता ही है। अतएव पूर्व तिथि दशमी से सम्बन्धित एकादशी को विद्धा और पर तिथि द्वादशी से सम्बन्धित एकादशी को शुद्धा का रूप दिया गया है । श्रीनारद पंचरात्र में बताया गया है कि--**पूर्व विद्धातिथिस्त्यागो वैष्णवस्य हि लक्षणम्** इस वचनानुसार पूर्व विद्धा त्याज्य और शुद्धा एकादशी ही ग्राह्य है भले ही एकादशी में द्वादशी आ जाय इस बात का दोष नहीं पर पूर्व तिथि दशमी विद्धा अर्थात् दशमी ४५ घटी के ऊपर हो तो व्रत एकादशी में न करके द्वादशी में करना चाहिये ।

इसी प्रकार श्रीराम-कृष्णादि भगवज्जयन्तियां तथा श्रीआचार्य चरणों के पाटोत्सवादि में भी इसी क्रम से पूर्व विद्धा त्याज्य और पर विद्धा (शुद्धा) तिथि ही ग्राह्य है ।

यह वेध अति प्राचीन होने के कारण बहुजन सम्मत भी है । उदाहरणार्थ जैसे---

१. महर्षि पाणिनि मुनि ने स्वनिर्मित अष्टाध्यायी के एक सूत्र (अनद्यतने लुट्) में गत रात्रि के १२ बजे से लेकर आगामी रात्रि के १२ बजे तक के काल को अद्यतन काल (वर्तमान काल) अर्थात् आज का दिन बताया है और इससे पूर्व तथा पर काल को अनद्यतन काल माना है ।

२. वीर विक्रमादित्य का नवीन संवत् भी चैत्र मास के अर्द्धभाग (अर्थात् अमावस्या के पश्चात्) शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से ही प्रारम्भ होता है ।

३. ईस्वी सन् (अंग्रेजों के महीनों) की तारीख भी रात्रि के अर्द्धभाग १२ बजे बाद ही बदल जाती है ।

४. रात्रि के अर्द्धभाग अर्थात् १२ बजे बाद किसी की मृत्यु हो जाने पर भी दूसरा दिन मान लिया जाता है, इत्यादि ।

इसके अतिरिक्त व्रतों में अष्ट महाद्वादशियों का भी विधान है- इनके सम्बन्ध में तो ऐसा प्रमाण है कि शुद्धा एकादशी हो और दूसरे दिन कोई महाद्वादशी भी हो तो शुद्धा एकादशी और दूसरे दिन महाद्वादशी इन दोनों का ही व्रत (उपवास या फलाहार) करे, यदि दोनों दिन व्रत करने की सामर्थ्य न हो तो एकादशी को छोड़कर महाद्वादशी का ही व्रत करे ऐसी शास्त्रीय आज्ञा है ।

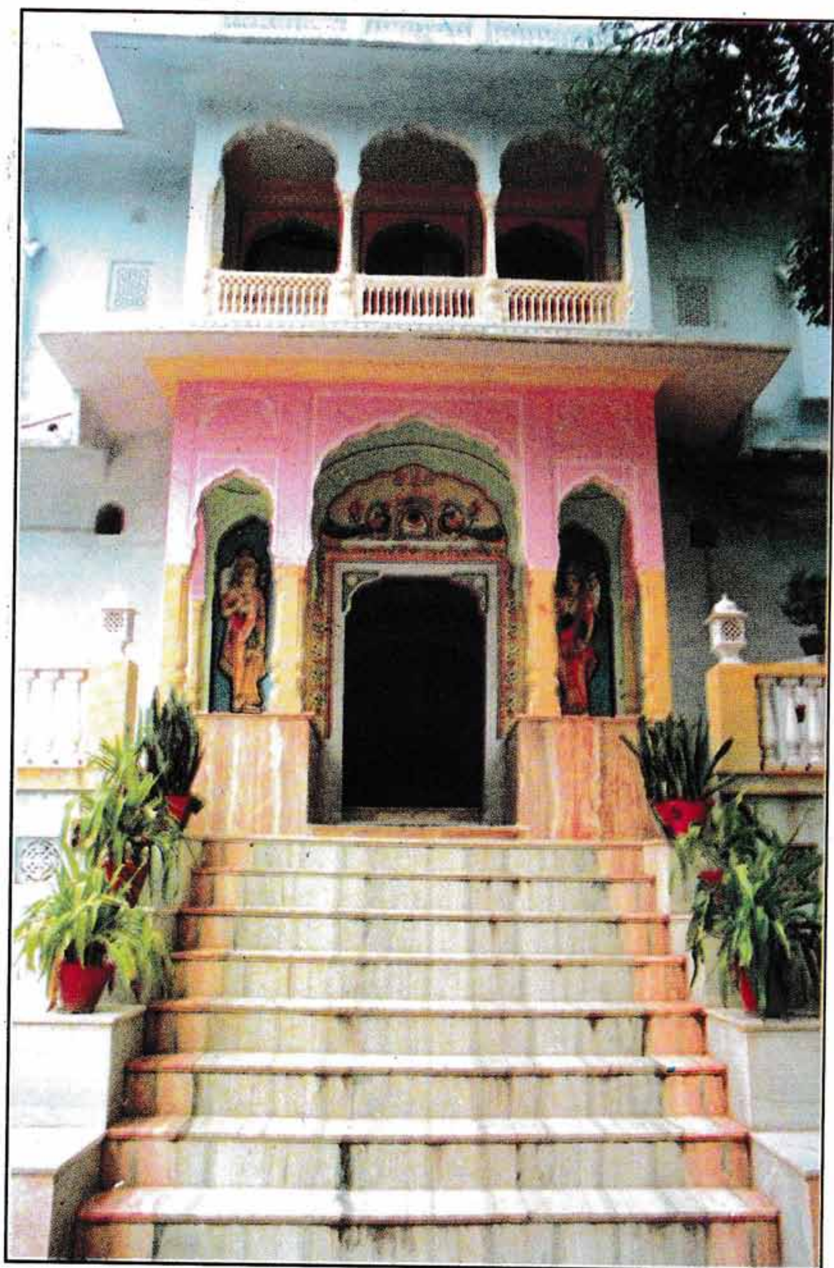
उन महाद्वादशी की जानकारी इस प्रकार है--चार महाद्वादशी तो नक्षत्र के योग से और चार तिथियों के योग से बनती है । जैसे--किसी भी मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी पुनर्वसु नक्षत्र से युक्त हो तो जया, रोहिणी से युक्त हो तो जयन्ती, पुष्य से युक्त हो तो पापनाशिनी और चाहे कृष्ण पक्ष अथवा शुक्ल पक्ष में द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र हो तो वह विजया महाद्वादशी कहलाती है ।

अब तिथियों के योग से लीजिये । जैसे--एकादशी पूर्ण हो और दूसरे दिन भी कुछ एकादशी हो वह महाद्वादशी उन्मीलिनी, एकादशी तथा द्वादशी सम्पूर्ण हो और फिर त्रयोदशी को भी कुछ द्वादशी अवशिष्ट हो तो वह महाद्वादशी वञ्जुलिनी कहलाती है । इसी प्रकार प्रातः एकादशी हो फिर द्वदशी का क्षय होकर रात्रि शेष में त्रयोदशी हो वह महाद्वादशी त्रिस्पृशा कहलाती है । किसी पक्ष में अमावस्या या पूर्णिमा दो हो तो वह महाद्वादशी पक्ष वर्धिनी कही जाती है ।

इस प्रकार श्रीभगवन्निम्बार्क सम्मत यह कपाल वेध सिद्धान्त यहाँ अति संक्षिप्त रूप में परिवर्णित हुआ है । जिन्हें एतद्विषयक विशेष जिज्ञासा हो वे स्वसाम्प्रदायिक **श्रीनिम्बार्कव्रत निर्णय, औदुम्बरसंहिता, स्वधर्मामृतसिन्धु** आदि प्राचीनतम ग्रन्थों का अनुशीलन करें ।



अ०भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठस्थ–श्रीसर्वेश्वर–राधामाधव
प्रभु के मन्दिर चौक प्रवेश का



सिंहपोल का मुख्यद्वार

श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय

एवं

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

परिचय

वैष्णव चतु:सम्प्रदायों में श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय अति प्राचीन सम्प्रदाय है। इसका प्रादुर्भाव श्रीब्रह्माजी के मानस पुत्र श्रीसनकादिक महर्षियों से होता है । जैसा कि--

सनकः श्रीब्रह्म रुद्र सम्प्रदायचतुष्टयम्

सनकादि मुनिजन, श्री (लक्ष्मी) ब्रह्माजी और भगवान् शंकर यही चारों वैष्णव चतु: सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं ।इस सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा श्रीहंस भगवान् से प्रारम्भ होती है । श्रीहंस भगवान् ने सनकादिकों के प्रश्न का समाधान कर उन्हें वैष्णवी दीक्षा प्रदान की थी । उपासना में श्रीसर्वेश्वर शालग्राम भगवान् की सेवा-पूजा करने की आज्ञा प्रदान की थी वह शुभ दिन था युगादि तिथि कार्तिक शुक्ला नवमी (अक्षय नवमी) हंस भगवान् के अवतार का मुख्य उद्देश्य था, श्रीसनकादिकों के प्रश्न का समाधान कर उन्हें वैष्णवी दीक्षा प्रदान करना । अत: कार्तिक शुक्ल नवमी (अक्षय नवमी) श्रीहंस-सनकादिक जयन्ती तथा श्रीसर्वेश्वर भगवान् का प्राकट्य दिवस भी उसी दिन मनाया जाता है ।

श्रीहंस-सनकादिकों का यह प्रसङ्ग श्रीमद्भागवत एकादश स्कन्ध अध्याय १३ श्लोक संख्या १६ से श्लोक संख्या ४२ तक में वर्णन हुआ है । [१]

श्रीहंस भगवान् के शिष्य सनकादि मुनिजन हैं और श्रीसनकादिकों के शिष्य देवर्षि नारद [२] तथा श्रीनारद मुनि के शिष्य हैं श्रीचक्रसुदर्शनावतार आद्याचार्य जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्य । श्रीहंस भगवान्, श्रीसनकादि मुनिजन तथा देवर्षि

---

१. अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ द्वारा संचालित श्रीनिम्बार्क ग्रन्थ माला का १६ वां पुष्प श्रीहंसावतार एकांकी नाटक तथा ३८ वां पुष्प हंसोपाख्यान इस विषय में द्रष्टव्य है ।

२. श्रीनिम्बार्क ग्रन्थमाला का ३२ वां पुष्प देवर्षिनारद एकांकी नाटक देखिये ।

श्रीनारद ये तीनों तो देवस्वरूप में हैं । अतः प्रायः करके कई सम्प्रदायों की परम्परा में इनका नाम आजाता है,--किन्तु इनके पश्चात् श्रीनिम्बार्क भगवान् आचार्य रूप में इस भूतल पर प्रकट हुए अतः यह सम्प्रदाय **श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय** के नाम से लोक में प्रसिद्ध हुआ ।

भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्य प्राकट्य युधिष्ठिर शके ६ में दक्षिण भारत तैलङ्ग (आन्ध्र प्रदेश) वैदुर्यपत्तनमुंगी पट्टन (वर्तमान पैठण निकटस्थ मूंगी ग्राम) गोदावरी तटवर्ती अरुणाश्रम में हुआ था । आपके पिता का नाम श्रीअरुण मुनि और माताश्री का नाम जयन्तीदेवी था । जन्मकालीन नाम श्रीनियमानन्द था । **नहि वैष्णवता कुत्र संप्रदाय पुरस्सरा** श्रीमद्भागवत माहात्म्य में इस श्रीनारदोक्त वचनानुसार द्वापर के अन्त में जब वैष्णव धर्म का ह्रास होने लगा तब भक्तजनों की करुणा भरी पुकार पर भगवदादेश पाकर श्रीचक्रराज सुदर्शन ने ही नियमानन्द के रूप में* अवतार लिया । इनकी समय समीक्षा तथा श्रीनियमानन्द से श्रीनिम्बार्क नाम क्यों पड़ा यह सब तो आगे चलकर उनके चरित्र में यथा स्थान वर्णन किया जायेगा ।

श्रीहंस भगवान् के बाद आचार्य परम्परा में रसिकराजराजेश्वर महावाणीकार जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ३४ पीठिका में श्रीनिम्बार्काचार्य पीठासीन हुए । आचार्यवर्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के द्वादश शिष्य थे । सभी की भावनानुसार आचार्यश्री ने अपने द्वादश शिष्यों में श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी को सम्प्रदाय परम्परानुसार श्रीसनकादि संसेवित श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा प्रदान कर उन्हें अपने आचार्यपीठ के उत्तराधिकारी के रूप में प्रतिष्ठित किया ।

श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के उन द्वादश शिष्यों के नाम तथा देवी को दीक्षा प्रदान करना आदि इसका वर्णन आगे श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के प्रसंग में यथास्थान दिया जायेगा । अब यहाँ से श्रीहंस भगवान् से लेकर अद्यावधि वर्तमान आचार्यचरण तक सभी परम्परा का संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है--

---

* श्रीनिम्बार्काचार्यजी का द्वैताद्वैत सिद्धान्त और उपासना तत्त्व नामक श्रीनिम्बार्क ग्रन्थमाला का २५ वां पुष्प तथा इसी ग्रन्थमाला का पुष्प सं० २ श्रीनिम्बार्क जन्मकथा एवं पुष्प सं० २० श्रीनिम्बार्क प्राकट्य भी देखें ।

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



श्री हंस भगवान

श्रीहंस भगवान्

हंसस्वरूपं रुचिरं विधाय यः सम्प्रदायस्य प्रवर्तनार्थं ।
स्वतत्त्वमाख्यत्सनकादिकेभ्यो नारायणं तं शरणं प्रपद्ये ॥

परिचयः--

अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक करुणा-वरुणालय सर्वान्तिर्यामी सर्वशक्तिमान् सर्वाधार श्रीहरि के २४ अवतारों में श्रीहंस भगवान् का भी एक अवतार है। आपका प्राकट्य सत्ययुग के प्रारम्भ काल में युगादि तिथि कार्तिक शुक्ल नवमी (अक्षय नवमी) को माना जाता है। आपके अवतार का मुख्य प्रयोजन यही है कि एक बार श्रीसनकादि महर्षियों ने पितामह श्रीब्रह्माजी महाराज से यह प्रश्न किया कि--

गुणेष्वाविशते चेतो गुणांश्चेतसि च प्रभो ।
कथमन्योन्यसंत्यागो मुमुक्षोरतितितीर्षोः ॥

पितामह !जब कि चित्त विषयों की ओर स्वभावतः जाता है। और चित्त के भीतर ही वासना रूप से विषय उत्पन्न होते है, तब मुमुक्षजन उस चित्त और विषयों का परित्याग कैसे करें ?

यह चित्तवृत्ति निरोधात्मक गम्भीर प्रश्न जब ब्रह्माजी के समझ में नहीं आया तब महादेव ने भगवान् श्रीहरि का ध्यान किया। इस प्रकार ब्रह्माजी की विनीत प्रार्थना पर **उर्जे सिते नवम्यां वै हंसो जातः स्वयं हरिः** कार्तिक शुक्ल नवमी को स्वयं भगवान् श्रीहरि ने हंसरूप में अवतार लिया । भगवान् ने हंसरूप इसलिये धारण किया कि जिस प्रकार हंस नीर क्षीर (जल और दूध) को पृथक् करने में समर्थ है, उसी प्रकार आपने भी नीर-क्षीर विभागवत् चित्त और गुणत्रय का पूर्ण विवेचन कर परमोत्कृष्ट दिव्य तत्त्व के साथ-साथ पंचपदी ब्रह्मविद्या श्रीमन्त्रराज का सनकादि महर्षियों को सदुपदेश कर उनके सन्देह की निवृत्ति की । यह प्रसङ्ग श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्ध अध्याय १३ में श्रीकृष्णोद्धव संवादरूप से विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है ।

श्रीसनकादि महर्षि

यदीयपादाब्जयुगाश्रयेण भक्तिर्वरिष्ठात्ववती विशुद्धा ।
उदश्चती श्रीभगवत्यजस्र नमाम्यहं श्रीसनकादिकं तम् ॥
जय जय सनक--सनन्दन, सनातन-सनत-कुमार ।
रूप चतुष्टय पद कमल, वन्दौ बारम्बार ॥

भगवत्परायण, बालब्रह्मचारी, सिद्धजन, तपोमूर्ति ये चारों भ्राता सृष्टिकर्ता श्रीब्रह्मदेव के मानस पुत्र हैं । इन चारों के नाम हैं--सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार । इनके उत्पन्न होते ही श्रीब्रह्माजी ने इनको सृष्टि विस्तार की आज्ञा दी, पर इन्होंने प्रवृत्ति मार्ग को बन्धन जानकर परम श्रेष्ठ निवृत्ति मार्ग को ही ग्रहण किया ।

इन महर्षियों ने श्रीहंस भगवान् द्वारा कार्तिक शुक्ल नवमी को वैष्णव पंचपदी ब्रह्मविद्या श्रीगोपाल मन्त्रराज की दीक्षा संप्राप्त कर लोक में निवृत्ति धर्म का प्रचार-प्रसार किया । अत: ये लोकाचार्य के नाम से प्रसिद्ध हैं । श्रीसनकादि मुनिजन ही निवृत्ति धर्म एवं मोक्ष मार्ग के प्रधान आचार्य हैं । पूर्वजों के पूर्वज होते हुये भी ये सदा ही पाँच-पाँच वर्ष पूर्व की अवस्था में रहकर भगवद्भजन में ही संलग्न रहते हैं । श्रीसर्वेश्वर प्रभु इन्हीं के संसेव्य ठाकुर हैं, भगवान् द्वारा संप्राप्त श्रीगोपाल मन्त्रराज का सतत अनुष्ठान करना इनका परम लक्ष्य है । जैसे--

नारायणमुखम्भोजामन्त्रस्त्वष्टादशाक्षरः ।
आविर्भूतः कुमारैस्तु गृहीत्वा नारदाय च ॥
उपदिष्टः स्वशिष्याय निम्बार्काय च तेन तु ।
एवं परम्पराप्राप्त -- मन्त्रष्त्वष्टादशाक्षरः ॥

यह अष्टादशाक्षर श्रीश्रीगोपाल मन्त्रराज श्रीहंसरूप नारायण द्वारा श्रीसनकादिकों को प्राप्त हुआ । श्रीसनकादिकों से देवर्षि श्रीनारदजी को मिला और श्रीनारदजी द्वारा सुदर्शनचक्रावतार भगवान् श्रीनिम्बार्क को संप्राप्त हुआ । इस प्रकार सम्प्रदाय में यह परम्परागत मन्त्र है । जो **गोपालतापिन्युपनिषद्** का वैदिक मन्त्र है । इसका वर्णन विभिन्न पुराणों एवं तन्त्रों में भी भलीप्रकार उपलब्ध है । श्रीसनकादिकों द्वारा लिखी हुई **श्रीसनत्कुमार संहिता** प्रसिद्ध है । इनका पाटोत्सव (जन्मदिवस) कार्तिक शुक्ल नवमी को मनाया जाता है ।

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



श्री सनकादि महर्षि

(सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार)

सनकादि--संसेव्य--भगवान्

श्रीसर्वेश्वर प्रभु

कारुण्यसिंधुं स्वजनैकबन्धुं कैशोरवेषं कमनीयकेशम् ।
कालिन्दिकूले कृतरासगोष्ठीं सर्वेश्वरं तं शरणं प्रपद्ये ॥

परिचय--

श्रीसनकादि संसेव्य (परमाराध्य) श्रीसर्वेश्वर भगवान् गुञ्जाफल सदृश अति सूक्ष्म श्रीशालग्राम स्वरूप श्री विग्रह हैं । इसके चारों ओर गोलाकार दक्षिणावर्तचक्र और किरणें बड़ी ही तेज पूर्ण एवं मनोहर प्रतीत होती हैं । मध्य भाग में एक बिन्दु है और उस बिन्दु के मध्य भाग में युगल किशोर श्रीराधाकृष्ण के सूक्ष्म दर्शन स्वरूप दो बड़ी रेखायें हैं। जो सूर्य के प्रकाश में भी कभी किसी भाग्यशाली सज्जन को ही दर्शन को मिलती हैं ।

यह श्रीसर्वेश्वर भगवान् की प्रतिमा श्रीसनकादिकों ने देवर्षि श्रीनारदजी को प्रदान की थी और श्रीनारदजी ने भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यजी को । इस प्रकार यह श्रीसर्वेश्वर भगवान् की शालग्राम प्रतिमा क्रमशः परम्परागत अद्यावधि पर्यन्त अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में विराजमान है । विश्व में इतनी प्राचीन एवं सूक्ष्म चमत्कारपूर्ण श्रीशालग्राम स्वरूप और कहीं पर भी नहीं है । जब श्रीआचार्यचरण धर्म प्रचारार्थ अथवा किन्हीं भक्तजनों के परमाग्रह पर यत्र-तत्र पधारते हैं तब, यही श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा साथ रहती है । श्रीसर्वेश्वर भगवान् श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के परमोपास्य इष्टदेव हैं । श्रीनिम्बार्काचार्यों की परम्परागत परमनिधि श्रीसर्वेश्वर प्रभु के दर्शन मात्र से समस्त पातक दूर होते हैं । इसी कारण श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के भक्तजनों में परस्पर मिलने पर **जय श्रीसर्वेश्वर** करने की प्रणाली सदा से चली आ रही है ।





महर्षिवर्य श्री सनकादि संसेव्य – श्री सर्वेश्वरप्रभु

भगवान् श्रीराधामाधव

सर्वेष्टं जयदेव--भक्तकविना नित्यं समाराधितं
श्रीवृन्दावन--कुंज--केलिरमणं श्रीरंगदेव्यर्चितम् ।
श्रीनिम्बार्कमुनीन्द्रपीठविलसत्कारुण्यपूरं परं
राधामाधवपादपद्मयुगलं वन्दे गिरा--कर्मणा ॥

परिचय--

श्रीराधामाधव प्रभु श्रीनिम्बार्क वीथि पथिक रसिक शिरोमणि श्रीजयदेव कवि संसेव्य ठाकुर हैं वर्तमान श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में विराजने से पहले बंगाल से आकर व्रजमण्डल में श्रीराधाकुण्ड (श्रीनिवासाचार्यजी की बैठक) पर विराजते थे। वि० सं० १८२३ में जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी महाराज को स्वप्न में आदेश दिया कि हमें पुष्कर क्षेत्रस्थ श्रीआचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) ले चलो । आचार्यश्री ने पूछा--कैसे किस प्रकार से ले चलें ? तब श्रीमाधवजी ने कहा कि--अपने रथ में बिठा ले चलो । प्रभु की आज्ञा के अनुसार रथ में विराजमान करके प्रस्थान किया । पीछे से श्रीराधा कुण्ड के व्रजवासी और बंगाली भक्तों ने विचार किया कि भगवान् को व्रज से बाहर नहीं ले जाने देना चाहिये । वे सबके सब संघटित होकर चले, रथ भरतपुर पहुंचा, वहां सेवा हो रही थी, पीछे आये हुए नर-नारियों ने आचार्यश्री से प्रार्थना की--श्रीमाधव भगवान् व्रज में ही विराजें, बाहर न पधारें । आचार्यश्री को प्रभु का आदेश हुआ है स्वयं वे अपनी इच्छा से पधारें हैं । उनकी इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नहीं हो सकता । यह चित्त में निश्चित करके भरतपुर नरेश ने निर्णय दिया कि आप सब रथ को खेंचकर ले जाइये, यदि माधवजी की इच्छा होगी तो पधार जायेंगे । अगर आप से रथ न चले और आचार्यश्री के घोड़े भी रथ को न खेंच सकें तो श्रीमाधवजी यहां भरतपुर में विराजेंगे । सैंकड़ों व्रजवासियों ने रथ को खैंचा, खूब जोर लगाया, परन्तु वह रथ अत्यन्त बल लगाये जाने पर तनिक भी न चल सका । फिर जब आचार्यश्री के घोड़े लगवाये और आचार्यश्री ने प्रार्थना की तो वह रथ चल पड़ा । सभी दर्शक चकित हो गये, जय जयकार की ध्वनि से गगन गूँज उठा । वि० सं० १८२३ ज्येष्ठ शुक्ल ४ का वह दिन भरतपुर और व्रजमण्डल के उपस्थित सभी नर-नारियों के हृदय पटलों पर बहुत दिनों तक अङ्कित रहा । इस घटना का उल्लेख कृष्णगढ राज्य के इतिहास रजिस्टरों में जयलाल कवि ने भी किया है । आचार्यपीठ (सलेमाबाद) के मार्ग में जितने नगर आये उनके नागरिकों ने श्रीमाधव प्रभु और आचार्य चरणों का हार्दिक

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥







॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः॥

भगवान् श्रीसर्वेश्वर – राधामाधव प्रभु

स्वागत किया । कृष्णगढ के नरेश और प्रजावर्ग को महान् हर्ष हुआ । आचार्यपीठ (सलेमाबाद) और यहाँ के निकटवर्ती ग्रामों की जनता के हर्ष का तो पारावार ही नहीं रहा । पुनीत दिवस ज्येष्ठ शु० १० (गङ्गादशहरा) को बड़े समारोह पूर्वक श्रीसर्वेश्वर प्रभु के सन्निकट श्रीमाधवजी विराजमान हुये ।

वि० सं० १८६० के लगभग देश में अराजकता छाई हुई थी । मुस्लिम शासन शिथिल हो चुका था । अंग्रेज शनैः शनैः देश को हथिया रहे थे.। कई शक्तिशाली फौजी लूट-मार कर रहे थे । ऐसी स्थिति में वि० सं० १८६८ में श्रीमाधवजी रूपनगर के किले में पधराये गये । आचार्यपीठ के विशाल मन्दिर को यवन लुटेरों ने ध्वंस कर डाला, तब कुछ दिनों बाद संगमरमर का नया मन्दिर बना । जोधपुर नरेश की ओर से मकराना से संगमरमर पत्थर भेंट रूप में अर्पित हुआ । वि० सं० १८७२ में श्रीमाधवजी रूपनगर से आचार्यपीठ (सलेमाबाद) पधारे, उसी समय रूपनगर के एक परम भक्त-शिल्पी द्वारा नव विनिर्मित श्रीकिशोरीजी की प्रतिमा की प्रतिष्ठा कराई गई । तब से श्रीराधामाधवजी अचल रूप से आचार्यपीठ (सलेमाबाद) में विराजमान हैं । ऐसी अद्भुत छवि के शायद ही कहीं अन्यत्र दर्शन मिल सके । प्रेमीजन श्रीराधामाधवजी के दर्शन कर तृप्त हो जाते हैं । गद्-गद् हृदय से वे कह उठते हैं कि--

सन्दरता निरखत फिर्यो, दैव योग ते आय ।
राधामाधव देखि छवि, अब न अनत चित जाय ॥

श्रीसूरदासजी के शब्दों में--

जिन आँखिन सों यह रूप लख्यो उन आँखिन सो अब देखिये का ।



देवर्षिवर्य श्रीनारदजी

सुधाकरे स्वच्छतनुत्वभाजं स्वर्णोपवीतित्वमुपैतिवासम् ।
प्रवर्तयन्तं हरिभक्ति--योगं श्रीनारदं तं शरणं व्रजामि ॥

परिचय--

भक्ति-ज्ञान-वैराग्य प्रभृति समस्त साधनों का समस्त लोक-लोकान्तरों में सर्वत्र विचरण कर प्रचुर प्रचार-प्रसार करने वाले कीर्तन कला विशेषज्ञ वीणाधर देवर्षिवर्य श्रीनारदजी महाराज के नाम को कौन नहीं जानता । आपका पर दुःख दुखित्व भाव बहुत प्रसिद्ध है । भगवत्कृपा से आपकी सर्वत्र अबाध गति है । आप सभी जीवों पर समान भाव रखते हुए सबका हितचिन्तन किया करते हैं । आपने श्रीहंस वंशावतंस ब्रह्मपुत्र महर्षिवर्य श्रीसनत्कुमारों से पञ्चपदी ब्रह्मविद्या अष्टादशाक्षरी श्रीगोपाल मन्त्रराज की दीक्षा ग्रहण कर लोक में सर्वत्र वैष्णव धर्म की विजय पताका फहराई । ध्रुव-प्रह्लाद आप ही के कृपापात्र थे । दक्ष प्रजापति के हर्यश्व एवं सबलाश्व नामक सहस्त्राधिक पुत्रों को आपने दिव्योपदेश प्रदान कर सृष्टि रचना विषयक कर्म बन्धन से छुडाकर निवृत्ति पथ परायण बनाया । इसी प्रकार राजा प्राचीन बर्हि को भी हिंसात्मक कर्मों की ओर से हटाकर भगवद्भक्ति की ओर प्रवृत्त किया । तात्पर्य यह है कि अहर्निश आपका भगवद्गुण गान तथा जगत्कल्याण में ही समय व्यतीत होता था । महर्षि वाल्मीकि तथा श्रीकृष्ण द्वैपायन वेदव्यास को संक्षिप्त रामचरित एवं चतुःश्लोकी भागवत का ज्ञान कराकर वाल्मीकि रामायण और श्रीमद्भागवत जैसे अनुपम ग्रन्थों का निर्माण करवाना आदि जिसके आप ही मूल प्रेरक एवं पथ प्रदर्शक थे। व्रजमण्डल में आकर श्रीगोवर्धन के समीप श्रीअरुणाश्रम में श्रीचक्र सुदर्शनावतार श्रीनियमानन्द (श्रीनिम्बार्क) को आपने ही श्रीसनकादि मुनिजनों द्वारा संप्राप्त पंचपदी ब्रह्मविद्या श्रीगोपालमन्त्रराज की दीक्षा प्रदान कर सनकादि संसेव्य भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा प्रदान की । आप सभी शास्त्रों के पूर्ण ज्ञाता थे । श्रीसनकादिकों के पूछने पर आपने बताया था कि--मैंने यजुर्वेद, ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, वेदविद्या, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या, सर्पविद्या और देवयजन विद्या आदि सभी विद्यायें पढ़ी हैं, फिर भी हे महर्षे ! न जाने क्यों चिन्ताग्रस्त हूँ अतः आत्मशान्त्यर्थ आपकी शरण में आया हूँ ।

देवर्षि श्रीनारदजी के इस कथन से हमको यह भी शिक्षा मिलती है कि- श्रीहरिगुरु परायण (शरणागत) हुये बिना अर्थात् भगवद्भक्ति विना चाहे जितनी विद्यायें पढ़ कर ज्ञानी बन जाओ पर वास्तविक शान्ति प्राप्त नहीं होती ।

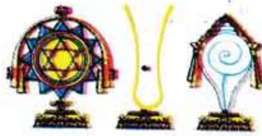
आपके द्वारा निर्मित अनेक शास्त्रों में श्रीनारद पंचरात्र व श्रीनारद-भक्ति-सूत्र प्रधान हैं । आपका जयन्ती दिवस (पाटोत्सव) मार्गशीर्ष शुक्ल व्यञ्जन द्वादशी तिथि माना जाता है । ❊

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



देवर्षिवर्य श्रीनारदजी

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥



॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः॥

श्रीसुदर्शनचक्रावतार आद्याचार्य जगद्गुरु

श्रीभगवन्निम्बार्काचार्य

भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्य

यत्सम्प्रदायाश्रयणान्नराणां श्रीराधिकाकृष्णपदारविन्दे ।
प्रेमागरीयान्सहसाभ्युदैति निम्बार्कमेतं शरणं प्रपद्ये ॥

परिचय--

आपका आविर्भाव युधिष्ठिर शके ६ में कार्तिक शुक्ल १५ को सायंकाल मेष लग्न में हुआ था । जन्म समय चन्द्र, मङ्गल, बुध, गुरु और शनि ये पाँच ग्रह उच्च स्थान में थे । माता का नाम श्रीजयन्तीदेवी तथा पिता का नाम श्रीअरुण मुनि था । जन्मस्थान दक्षिण प्रान्त गोदावरी तटवर्ती श्रीअरुणाश्रम है । यह स्थान वैदुर्यपत्तन (मूंगी पट्टन) जो कि जि० औरंगाबाद, महाराष्ट्र राज्य में आजकल पैठण के नाम से प्रसिद्ध मूंगी ग्रामस्थ श्रीअरुणाश्रम है । आपका जन्मकालीन नाम श्रीनियमानन्द था । भक्तजनों की करुणा भरी पुकार पर गोलोक विहारी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ने अपने परम प्रिय आयुध श्रीसुदर्शन को आदेश देते हुये कहा कि--

सुदर्शन--महाबाहो ! कोटिसूर्यसमप्रभ ! ।
अज्ञानतिमिरान्धानां विष्णोर्मार्गं प्रदर्शय ॥

हे कोटि सूर्य सदृश दिव्य तेजधारी महाबाहो चक्रराज ! अब शीघ्र ही भूतल पर अवतरित होकर अज्ञान रूप घोर अन्धकार में डूबे हुए जीवों को वैष्णव धर्म के प्रचार--प्रसार द्वारा भक्ति का पथ प्रदर्शन कराओ ।

इस भगवदादेशानुसार श्रीचक्रराज सुदर्शन ने उपर्युक्त दक्षिण देश में बालक नियमानन्द के रूप में अवतार लिया ।

यह निम्बार्क सम्प्रदाय अति प्राचीन है । युधिष्ठिर शके ६ को आज पाँच हजार वर्षों से भी अधिक समय चल रहा है । जैसे-धर्मराज युधिष्ठर शके प्रमाण ३०४४ वर्ष पश्चात् विक्रम सं० के इस समय २०४१ वर्ष इन दोनो का योग मिलाकर ५०८५ वर्ष हुए जिसमें युधिष्ठिर शके ६ में आपका जन्म होने के कारण ६ वर्ष कम करने से ५०७१ वर्ष होते है। अर्थात् वि० सं० २०४१ में आपके प्राकट्य समय को ५०७१ वर्ष हुए जोकि कई स्थानों (ग्रन्थ या व्रतोत्सव पत्रों) पर निम्बार्काब्द के आगे अंकित रहता है।

एकबार आपने अपने आश्रम में दिवाभोजी दण्डी महात्मा के रूप में आये हुए ब्रह्माजी को रात्री हो जाने पर भोजन करने से निषेध करते देखकर आपने नीम वृक्ष पर अपने तेज तत्त्व श्रीसुर्दशनचक्र को आवाहन कर सूर्य रूप में दर्शन कराकर उन्हें भोजन कराया। निम्ब (नीम) के वृक्ष पर अर्क(सूर्य) के दर्शन कराने पर ब्रह्माजी द्वारा आपका श्रीनियमानन्द से **निम्बार्क** नाम पडा।आपके द्वारा प्रसारित

सम्प्रदाय को **श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय** के नाम से कहा जाता है। आपने देवर्षि श्रीनारद जी द्वारा इसी स्थान श्रीगोवर्धन की उपत्तिका अरुणाश्रम--वर्तमान में श्रीनिम्बग्राम में पंचपदी ब्रह्मविद्या गोपाल--मन्त्रराज की दीक्षा एवं श्रीसनकादि संसेव्य गुञ्जाफल सदृश स्वरूप दक्षिणावर्ती चक्राङ्कित शालग्राम रूप श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा ग्रहण कर श्रीहंस--सनकादि द्वारा परम्परा गत स्वाभाविक द्वैताद्वैत सिद्वान्त और युगल किशोर श्रीराधा--कृष्ण की युगल उपासना का लोक में प्रचार--प्रसार किया। आपका सिद्वान्त और उपासना संक्षिप्त में इस प्रकार है--

श्रीनिम्बार्क सिद्वान्त में तत्त्वत्रय (ब्रह्म,जीव और प्रकृति) अनन्त और अनादि है। ब्रह्म स्वतन्त्र है। जीव और प्रकृति परतन्त्र (ब्रह्म के अधीन) है। बद्ध-बद्धमुक्त और मुक्त सामान्यत: जीवों के ये तीन प्रभेद है। प्रकारान्तर से अनेक हो जाते हैं जो सिद्धान्त शास्त्रों द्वारा जाने जा सकते हैं। समस्त चराचर जगत् ब्रह्म का अंश एवं परा-- परात्मिका प्रकृति शक्ति होने के कारण सत्य है। जीव और प्रकृति रूप से चराचरात्मक सम्पूर्ण विश्व--ब्रह्म से भिन्न है, किन्तु उसका अंश एवं शक्ति होने के कारण स्वभावत: अपृथक् सिद्ध अभिन्न भी है। यही स्वाभाविक द्वैताद्वैत(भेदाभेद तथा भिन्नाभिन्न नामक) सिद्धांत है। इस सम्प्रदाय में जीव को सखी भाव द्वारा नित्य किशोर निकुञ्जविहारी प्रियाप्रियतमलाल श्रीराधाकृष्ण की पंचकालानुष्ठान विधि से उपासना करने का विधान है। श्रीनित्यनिकुञ्ज में आप रङ्गदेवी जू के नाम से सेवा में रहते हैं।

आपके द्वारा रचित अनेक ग्रन्थों में उपलब्ध ग्रन्थ इस प्रकार हैं--वादरायण कृत ब्रह्मसूत्रों पर **वेदान्त पारिजात सौरभ नामक भाष्य, वेदान्त कामधेनु दश श्लोकी, मन्त्र रहस्य षोडशी, प्रपन्नकल्पवल्ली, राधाष्टक और प्रातः स्मरणादि स्तोत्र।**



।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



पाञ्चजन्य शंखावतार वेदान्त कौस्तुभ भाष्यकार

आचार्यवर्य श्रीनिवासाचार्यजी

आचार्यवर्य श्रीनिवासाचार्य

शंखावतारः पुरुषोतमस्य यस्य ध्वनिः शास्त्रमचिन्त्यशक्तिः ।
यत्स्पर्शमात्राद् ध्रुवमाप्तकामस्तं श्रीनिवासं शरणं प्रपद्ये ॥

परिचय--

ये भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र करकमलस्थ श्रीपाञ्चजन्य शंख के अवतार हैं तथा श्रीनिम्बार्क भगवान् के प्रमुख शिष्य हैं ।इनका निवास स्थान व्रजमण्डल में श्रीगोवर्धन के समीप श्रीराधाकुण्डवर्ती ललिता कुण्ड पर है यह स्थान श्रीनिवासाचार्यजी की बैठक के नाम से प्रसिद्ध है । इस स्थान पर आपके चरण चिह्न हैं जिनकी नियमित रूप से सेवा-पूजा होती है । आपके शंखावतार होने का प्रमाण आप ही के पट्ट शिष्य श्रीविश्वाचार्यजी महाराज द्वारा निर्मित उपर्युक्त श्लोक में बताया गया है । आपके द्वारा निर्मित ब्रह्म सूत्रों पर वृहद्भाष्य **वेदान्त कौस्तुभ** के नाम से प्रसिद्ध है । इसके अतिरिक्त और भी अनेक ग्रन्थ हैं, जिनमें केवल **लघुस्तवराज** मिलता है अन्य-ख्याति निर्णय, पारिजात सौरभ भाष्य, रहस्य प्रबन्ध, कठोपनिषद् भाष्य आदि अनुपलब्ध हैं ।

आचार्यरूप में आप श्रीपाञ्चजन्य शंखावतार हैं और निकुञ्ज उपासना में श्रीनव्यवासा (प्रियाप्रियतम श्रीयुगलकिशोर की नित्य सहचरी) के अवतार माने जाते हैं । आपका पाटोत्सव दिवस माघ शुक्ल पंचमी (वसन्त पंचमी) को मनाया जाता है ।

श्रीआचार्य--पञ्चायतन

श्रीमद्धंसं कुमाराँश्च नारदं मुनिपुङ्गवम् ।
निम्बार्कं श्रीनिवासञ्च वन्दे आचार्य-पंचकम् ॥

श्रीहंस भगवान् से लेकर श्रीनिवासाचार्य पर्यन्त इन पांचों आचार्यों को आचार्य-पञ्चायतन के नाम से कहा जाता है । श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) एवं श्रीवृन्दावनधाम, निम्बग्राम आदि कई एक स्थानों में इन पाँचों की कहीं चित्रपट रूप में तथा कहीं शैली प्रतिमाओं के रूप में स्थापना कराई हुई है । नित्य प्रति सेवा-पूजन का क्रम भी भगवदर्चा के समान ही चलता है ।

द्वादश आचार्य एवं अष्टादश भट्ट

श्रीनिवासाचार्य से लेकर श्रीदेवाचार्य पर्यन्त इन निम्नांकित आचार्यों की **द्वादशाचार्य** संज्ञा है तथा श्रीसुन्दरभट्टाचार्य से लेकर श्री श्रीभट्टाचार्य पर्यन्त अट्ठारह भट्टों की **अष्टादश भट्ट** संज्ञा है । उनके नाम, ग्रन्थ एवं पाटोत्सव आदि का परिचय इस प्रकार है--

(६) श्रीविश्वाचार्य--

इनके द्वारा रचित कई एक ग्रन्थ हैं, उन ग्रन्थों में **पञ्चघाटी** स्तोत्र **प्रपत्ति चिन्तामणि** पर व्याख्या (सेतु से ज्ञात) अनुपलब्ध इन्हीं की रचना मानी जाती है तथा अन्य ग्रन्थ भी अनुपलब्ध हैं । पाटोत्सव फाल्गुन शुक्ल ४ (चतुर्थी) का है ।

(७) विवरणकार श्रीपुरुषोत्तमाचार्य--

इनके भी निर्मित ग्रन्थ अनेक हैं । उनमें वेदान्त कामधेनु दशश्लोकी पर विस्तृत भाष्य **वेदान्तरत्नमञ्जूषा** इनका सुप्रसिद्ध ग्रन्थ है । वेदान्तरत्नमञ्जूषा की भूमिका में इनका विस्तृत चरित्र उल्लिखित है । पाटोत्सव चैत्र शुक्ला ६ (षष्ठी) का होता है ।

(८) श्रीविलासाचार्य--

श्रीकृष्णस्तवराज, शान्ति कान्ति० आदि वेदान्त पच्चीस-श्लोकी इनकी ही रचना का अनुमान साम्प्रदायिक पुरातन शोधकर्ता विद्वानों ने माना है । पाटोत्सव वैशाख शुक्ल ८ (अष्टमी) है ।

(९) श्रीस्वरूपाचार्य--

पाटोत्सव ज्येष्ठ शुक्ल ७ (सप्तमी) का है ।

(१०) श्रीमाधवाचार्य--

पाटोत्सव आषाढ शुक्ल १० (दशमी) ।

(११) श्रीबलभद्राचार्य--

पाटोत्सव श्रावण शुक्ल ३ (तृतीया) ।

(१२) श्रीपद्माचार्य--

पाटोत्सव भाद्रपद शुक्ल १२ (द्वादशी) ।

(१३) श्रीश्यामाचार्य--

पाटोत्सव आश्विन शुक्ल १३ (त्रयोदशी) ।

(१४) श्रीगोपालाचार्य--

पाटोत्सव भाद्रपद शुक्ल ११ (एकादशी) ।

(१५) श्रीकृपाचार्य--

पाटोत्सव मार्गशीर्ष शुक्ल १५ (पूर्णिमा) ।



श्रीद्वादश आचार्य में— १. श्रीनिवासाचार्य, २. श्रीविश्वाचार्य, ३. वेदान्तरत्न मञ्जूषाकार श्री पुरुषोत्तमाचार्य, ४. श्रीविलासाचार्य, ५. श्रीस्वरूपाचार्य, ६. श्रीमाधवाचार्य



७. श्रीबलभद्राचार्य, ८. श्रीपद्माचार्य, ९. श्रीश्यामाचार्य, १०. श्री गोपालाचार्य
११. श्री कृपाचार्य, १२. जान्हवी (ब्रह्मसूत्र भाष्य) कार श्रीदेवाचार्य



अष्टादश भट्टाचार्य में——१. सेतुका (जान्हवी व्याख्या) कार श्रीसुन्दरभट्टाचार्य, २. श्रीपद्मनाभट्टाचार्य, ३. श्रीउपेन्द्रभट्टाचार्य, ४. श्रीरामचन्द्रभट्टाचार्य, ५. श्रीवामनभट्टाचार्य, ६. श्रीकृष्णभट्टाचार्य, ७. श्रीपद्माकरभट्टाचार्य , ८. श्रीश्रवणभट्टाचार्य , ९. श्रीभूरिभट्टाचार्य

(१६) जान्हवी (ब्रह्मसूत्र भाष्य) कार श्रीदेवाचार्य--

इनके अनेक ग्रन्थ मिलतें हैं । जिसमें कुछ मुद्रित भी हैं । इनका विशेष परिचय मुद्रित **जान्हवी** की प्रथम तरङ्ग की भूमिका में देखना चाहिये । आपने ब्रह्मसूत्र पर जान्हवी नामक बड़े ही सुन्दर सरस अनुपम भाष्य की रचना की है । श्रीनिम्बार्क भगवान् कृत ब्रह्मसूत्र भाष्य वेदान्त पारिजात सौरभ की भाँति यह भाष्य परम मननीय है । पाटोत्सव माघ शुक्ल ५ (वसन्त पंचमी) है ।

(१७) सेतुका (जान्हवी व्याख्या) कार श्रीसुन्दरभट्टाचार्य--

इनके भी रचित ग्रन्थ विपुल मात्रा में मिलते हैं । बहुत से मुद्रित भी हैं । आपने ब्रह्म सूत्रों पर श्रीदेवाचार्यजी महाराज द्वारा निर्मित जान्हवी टीका पर **सेतु** नामक विस्तृत व्याख्यान लिखा है । नाम के अन्त में भट्ट पदवी इन्हीं आचार्यचरण से प्रारम्भ होती है । पाटोत्सव मार्गशार्ष शुक्ल २ (द्वितीया) है ।

(१८) श्रीपद्मनाभभट्टाचार्य--

पाटोत्सव वैशाख कृष्ण ३ (तृतीया) ।

(१९) श्रीउपेन्द्रभट्टाचार्य--

पाटोत्सव चैत्र कृषण ४ (चतुर्थी) ।

(२०) श्रीरामचन्द्रभट्टाचार्य--

पाटोत्सव वैशाख कृष्ण ५ (पञ्चमी) ।

(२१) श्रीवामनभट्टाचार्य--

पाटोत्सव ज्येष्ठ कृष्ण ६ (षष्ठी) ।

(२२) श्रीकृष्णभट्टाचार्य--

पाटोत्सव आषाढ कृष्ण ९ (नवमी) ।

(२३) श्रीपद्माकरभट्टाचार्य--

पाटोत्सव आषाढ कृष्ण ८ (अष्टमी) ।

(२४) श्रीश्रवणभट्टाचार्य--

पाटोत्सव कार्तिक कृष्ण ९ (नवमी) ।

(२५) श्रीभूरिभट्टाचार्य--

पाटोत्सव आश्विन कृष्ण १० (दशमी) ।

(२६) श्रीमाधवभट्टाचार्य--

पाटोत्सव कार्तिक कृष्ण ११ (एकादशी) ।

(२७) श्रीश्यामभट्टाचार्य--

पाटोत्सव चैत्र कृष्ण १२ (द्वादशी)

(२८) श्रीगोपालभट्टाचार्य--

पाटोत्सव पौष कृष्ण ११ (एकादशी) ।

(२९) श्रीबलभद्रभट्टाचार्य--

पाटोत्सव माघ कृष्ण १४ (चतुर्दशी) ।

(३०) श्रीश्रीगोपीनाथभट्टाचार्य--

पाटोत्सव श्रावण शुक्ल ७ (सप्तमी) ।

(३१) श्रीकेशवभट्टाचार्य--

पाटोत्सव चैत्र शुक्ल १ (प्रतिपदा) ।

(३२) श्रीगाङ्गलभट्टाचार्य--

पाटोत्सव चैत्र कृष्ण २ (द्वितीया) ।

अनन्त श्रीविभूषित श्रीसुदर्शनावतार आद्याचार्य जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्क से लेकर जगद्विजयी प्रस्थानत्रयी भाष्यकार श्रीकेशवकाश्मीरिभट्टाचार्यजी पर्यन्त सभी आचार्यचरण पञ्चद्राविड़ (दक्षिणात्य ब्राह्मण कुलोत्पन्न) ब्राह्मण थे । तदनन्तर श्री श्रीभट्टदेवाचार्यजी से लेकर वर्तमान आचार्यचरण (श्री श्रीजी महाराज) पर्यन्त सभी आचार्यचरण पञ्च गौड़ (गौड़ ब्राह्मण कुलोत्पन्न) ब्राह्मण ही पीठासीन होते आ रहे हैं ।

श्रीसनकादि संसेव्य भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु जगद्गुरु आद्याचार्य भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यजी को देवर्षि श्रीनारदजी से संप्राप्त हुये थे । जो कि श्रीनिम्बार्काचार्यजी से लेकर वर्तमान आचार्यचरण श्री श्रीजी महाराज पर्यन्त उपर्युक्त इन सभी आचार्य चरणों (पूर्वाचार्यों) द्वारा संसेवित होते आ रहे हैं । अतः यह श्रीविग्रह अति प्राचीन और चमत्कारपूर्ण है ।

वही सनकादि संसेव्य, सभी पूर्वाचार्यों द्वारा संपूजित, अति प्राचीन, सूक्ष्म शालग्राम श्रीविग्रह, भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु, अद्यावधि (आज भी) अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) राजस्थान में विद्यमान हैं जो कि श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के परमाराध्य एवं कुलदेव हैं । यही कारण है कि इन्हीं श्रीसर्वेश्वर प्रभु की श्रीनिम्बार्काचार्य से लेकर वर्तमान आचार्य पर्यन्त परम्परागत सेवा चली आने के कारण श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय में एकमात्र जगद्गुरु (आचार्यगादी) अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) ही है एवं सम्बन्धित शाखा स्थान भारत में यत्र-तत्र सहस्रों में विद्यमान हैं ।



१०. श्री माधवभट्टाचार्य, ११. श्रीश्यामभट्टाचार्य, १२. श्रीगोपालभट्टाचार्य, १३. श्रीबलभद्रभट्टाचार्य, १४. श्रीश्रीगोपीनाथभट्टाचार्य, १५. श्रीकेशवभट्टाचार्य, १६. श्रीगाङ्गलभट्टाचार्य, १७. श्रीकेशवकाश्मीरिभट्टाचार्य, १८. श्रीश्रीभट्टदेवाचार्य

।। श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ।।  ।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः।।

प्रभावृत्तिकार जगद्विजयी आचार्यवर्य

श्रीकेशवकाश्मीरिभट्टाचार्यजी

(३३) आचार्यवर्य श्रीकेशवकाश्मीरिभट्टाचार्य

काश्मीरि केशवं वन्दे प्रभां वेदान्त--कौस्तुभीम् ।
टीकां निर्मितवान् यश्च चकार क्रमदीपिकाम् ॥
काश्मीरि की छाप पाप तापनि जगमंडन ।
दृढ़ हरिभक्ति कुठारआन धर्म विटप विहंडन ॥
मथुरा मध्य म्लेच्छ वाद करि बरबट जीते ।
काजी अजित अनेक देखि परचैं भय भीते ॥
विदित बात संसार सब सन्त साखि नाहिन दुरी ।
श्रीकेसौभट नर मुकुटमनि जिनकी प्रभुता विस्तरी ॥
(श्रीनाभास्वामी कृत भक्तमाल)

परिचय--

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्य दिग्विजयी प्रस्थानत्रयी भाष्यकार श्रीकेशवकाश्मीरिभट्टाचार्य इस परम्परा में श्रीहंस भगवान् से ३३ वीं संख्या में श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर विराजमान थे । आपका आविर्भाव दक्षिण देशस्थ वैदुर्यपत्तन (मुंगी पट्टन) श्रीनिम्बार्काचार्यजी की वंश परम्परा में ही हुआ था । आपका स्थिति काल १३ वीं शताब्दी माना जाता है । आपने भारत भ्रमण कर कई बार दिग्विजय किया था । काश्मीर में अधिक निवास करने के कारण आपके नाम के साथ काश्मीरि विशेषण प्रसिद्ध हो गया था । काश्मीर में ही आपने वेदान्त सूत्रों पर **कौस्तुभ प्रभा** नामक विशद् भाष्य लिखा और उज्ज्जैन में कुछ दिनों स्थाई निवास कर श्रीमद्भागवत पर **तत्त्व प्रकाशिका** नामक टीका लिखी, किन्तु उसमें वेदस्तुति वाला सन्दर्भ ही उपलब्ध है । इसी प्रकार आपका एक **क्रमदीपिका** नामक ग्रन्थ भी है, जिसमें मन्त्रानुष्ठान का विधि पूर्वक वर्णन है । श्रीमद्भगवद्गीता एवं उपनिषदों पर भी आपकी विस्तृत संस्कृत टीका है ।

एक बार आपने सुना कि श्रीकृष्ण जन्म भूमि मथुरा में विश्राम घाट के मुख्य मार्ग के दरवाजे पर तान्त्रिक यवनों ने एक ऐसा यन्त्र लगाया है कि उसके नीचे से जो कोई हिन्दू निकलता है वह सुन्नत होकर मुसलमान बन जाता है । इस प्रकार उस तान्त्रिक बल पर कोई हिन्दू विधर्मी बना लिये गये, तब आपने वहाँ जाकर अपनी तन्त्र--मन्त्र शक्ति से उसी स्थान पर एक ऐसा यन्त्र बांधा जिससे उसके नीचे से

निकलने पर कई मुसलमान चोटी उत्पन्न होकर हिन्दू बनने लगे । यह आश्चर्य देख यवनों का मुखिया काजी आकर आपके शरणागत हुआ और आगे के लिए एक पट्टा (प्रतिज्ञा-पत्र) कर दिया कि हम तथा अन्य सभी व्रजमण्डल चौरासीकोश के यवन आपकी शरण में रहेंगे इत्यादि और भी उस पट्टे में अनेक विषय उल्लिखित हैं । उस प्रतिज्ञा--पत्र की प्रतिलिपि अद्यावधि भी सुरक्षित विद्यमान है । इस भाँति इन श्रीआचार्यपाद के बहुत से चरित्र हैं जिनकी विशेष जानकारी के लिये **आचार्य-चरित्र** एवं **श्रीकेशव दिग्विजय सार समुच्चय** नामक ग्रन्थ देखने चाहिये । आपने मुसलमान बने हुए हिन्दुओं की पुनः शुद्धि भी की । इस प्रकार सर्वत्र फैले हुए पाखण्ड का नाश कर वैष्णव धर्म की विजय पताका फहराई ।

एक बार एक मूर्ख (जड़) ब्राह्मण बालक को भी जिसका पिता उसकी जड़ता पर अहर्निश चिन्तित रहा करता था, शरणागत होने पर सरस्वती देवी का आवाहन कर उनके द्वारा वरदान दिलाकर संस्कृत का धुरंधर विद्वान् बना दिया । ऐसे आपके अनेक चरित्र मिलते हैं । आप अधिकतर मथुरा में श्रीध्रुव-टीला पर ही निवास किया करते थे । आपका पाटोत्सव ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्थी को मनाया जाता है ।



।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



ब्रजभाषा आदिवाणी——श्रीयुगलशतककार

आचार्यवर्य श्रीश्रीभट्टदेवाचार्य

(३४) आचार्यवर्य श्री श्रीभट्टदेवाचार्य

वृन्दावने वेणुतटे सुरम्ये स्वाङ्के स्थितौ नित्यनिकुञ्जनाथौ ।
आराधयन्तं हृदि भावमग्नं श्रीभट्टदेवं शरणं प्रपद्ये ॥
मधुर भाव संमिलित, ललित लीला सुवलित छवि ।
निरखत हरखत हृदै, प्रेम वरषत सुकलित कवि ॥
भव निस्तारन हेतु, देत दृढ भक्ति सबनि नित ।
जासु सुजस ससि उदै, हरत अतितम भ्रम श्रम चित ॥
आनंदकंद श्रीनंदसुत, श्रीवृषभानुसुता भजन ।
श्रीभट्ट सुभट्ट प्रगट्यो अघट, रस रसिकन मन मोद घन ॥
(भक्तमाल)

परिचय--

आपका आविर्भाव गौड़ ब्राह्मण कुल में हुआ था । आपके पूज्य माता-पिता मथुरापुरी ध्रुव टीला पर निवास करते थे । आचार्य परम्परा में श्रीहंस भगवान् से आपश्री ३४ वीं संख्या में विद्यमान थे । प्रस्थानत्रयी भाष्यकार श्रीकेशवकाश्मीरि जैसे श्रीगुरुदेव तथा महावाणीकार रसिकराजराजेश्वर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज जैसे शिष्य आपकी दिव्य गरिमा के द्योतक है । इससे आपके प्रखर वैदुष्य तथा तप का सहज ही पता लग जाता है । संस्कृत एवं हिन्दी दोनों ही भाषाओं पर आपका पूर्ण अधिकार था । संस्कृत में 'श्रीकृष्णशरणापत्ति स्तोत्र' परम प्रसिद्ध है और भाषा ग्रन्थ **श्रीयुगलशतक** का रसिक समाज तथा भक्त समाज में विशेष प्रचार है । यह ग्रन्थ व्रजभाषा की आदिवाणी नाम से कहा जाता है । व्रजभाषा में सर्वप्रथम इसी ग्रन्थ का निर्माण हुआ । इस ग्रन्थ में श्रीप्रिया-प्रियतम की नित्य निकुञ्ज लीला विहार की सुललित रसमयी लीलाओं से सुसम्पन्न सौ दोहा और सौ पद हैं । अष्टयाम सेवा और वर्ष भर के सभी उत्सवादिकों का अत्यन्त मनोहर रसमय पूर्ण हृदयग्राही वर्णन है । एक समय श्रीभट्टदेवाचार्यजी ने **भीजत कब देखौं इन नैना** इत्यादि पद से युगल सरकार का ध्यान किया । ध्यान करते ही तत्काल श्रीप्रभु ने अभिलाषानुसार दर्शन दिये । भगवान् श्रीराधाकृष्ण इनकी गोद में विराजमान रहा करते थे तथा विविध प्रकार की इनके साथ क्रीड़ा किया करते थे । श्रीधामवृन्दावन में आपकी अगाध निष्ठा थी । वे अपने आपको तथा आराध्य देव भगवान् श्रीराधाकृष्ण को श्रीवृन्दावन

से बाहर देखने की बात नहीं करते थे । उन्होंने एक पद में यही बताया है कि--

रे मन ! वृन्दाविपिन निहार ।
यद्यपि मिले कोटि चिन्तामनि तदपि न हाथ पसार ॥
विपिन राज सीमा के बाहर हरि हूं को न निहार ।
जय श्रीभट्ट धूरि धूसर तनु यह आशा उर धार ॥

धाम निष्ठा की भाँति वे अपने आराध्यदेव की अनन्य निष्ठा के सम्बन्ध में भी कह रहे हैं कि--

सेव्य हमारे हैं सदा, वृन्दाविपिन विलास ।
नंद नंदन वृषभानुजा, चरण अनन्य उपास ॥

आपका स्थित काल १३ वीं शताब्दी का अन्त और १४ वीं शताब्दी का प्रारम्भ काल था । आप अपने युगल शतक के अन्तिम एक दोहे में बता रहे हैं कि--

नयन बाण पुनि राम शशि, गनौं अङ्क गति वाम ।
प्रगट भयो श्रीयुगलशतक, यह संवत अभिराम ॥

इस प्रकार इस ग्रन्थ रत्न का रचना काल विक्रम सम्वत् १३५२ बताया जाता है । इनका पाटोत्सव आश्विन शुक्ल २ (द्वितीया) को मनाया जाता है ।



।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



महावाणी–कार

आचार्यवर्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्य

(३५) आचार्यवर्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्य

जय जय श्रीहरिव्यासजू, रसिकन हित अवतार ।
महावानी रच सबनि को, उपदेस्यो सुख सार ॥

श्रीकृष्णचन्द्रचरणाम्बुजभृङ्गभावं चेतो नयन्तमनिशं करुणानिधानम् ।
श्रीमन्तमाश्रितजनप्रणयित्वभाजं व्यासं तमादिहरिशब्दनिवेशमीडे ॥

खेचरि नर की शिष्य निपट अचरज यह आवै ।
विदित बात संसार संत मुख कीरति गावै ॥
वैरागिन के वृन्द रहत संग श्याम सनेही ।
ज्यों जोगेश्वर मध्य मनो सोभित वैदेही ॥
श्रीभट्ट चरन रज परस तें सकल सृष्टि जाको नई ।
हरिव्यास तेज हरिभजन बल देवी को दीछा दई ॥
(भक्तमाल)

परिचय--

आप इस परम्परा में ३५ वीं संख्या में आचार्य पीठासीन थे । आपके भी संस्कृत एवं व्रजभाषा में विरचित अनेक ग्रन्थ हैं । उनमें संस्कृत में **सिद्धान्त रत्नाञ्जली** परम प्रसिद्ध है । यह ग्रन्थ श्रीभगवन्निम्बार्क कृत वेदान्त कामधेनु दशश्लोकी के व्याख्यारूप में है । व्रजभाषा में ***महावाणी*** प्रधान ग्रन्थ है । यह रस ग्रन्थों में सर्वोत्कृष्ट माना जाता है । यह महावाणी श्रीभट्टदेवाचार्यजी कृत श्रीयुगलशतक का मानों वृहद् भाष्य ही है । श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज विशेषतया मथुरापुरीस्थ नारद टीला पर निवास किया करते थे । अधिक समय तो आप लोक कल्याणार्थ भ्रमण में ही रहा करते थे । भ्रमण काल में वैष्णव धर्म का आपने सर्वाधिक प्रचार-प्रसार किया । सर्वत्र वैष्णव धर्म की विजय वैजयन्ती फहराई ।

श्रीसर्वेश्वर प्रभु की राजभोग सेवा के पश्चात् स्थान पर या भ्रमण काल में सर्वत्र वैष्णव सेवा भी मुख्यतया आपके यहाँ वृहद रूप से हुआ करती थी । शरणागत जनों को जहाँ-तहाँ पञ्च संस्कार पूर्वक वैष्णवी दीक्षा देकर परमार्थ की ओर अग्रसर करते हुए भगवद्भक्ति का प्रचार करना ही आपका मुख्य लक्ष्य था ।

भगवत सेवा परायण, अतिथि सत्कार और जीवों को भगवद्भक्ति रूप सद्ज्ञान की प्राप्ति कराने के अतिरिक्त जीव मात्र के प्रति दया के सम्बन्ध में तो उनका एक चमत्कार पूर्ण सुप्रसिद्ध वृतान्त इस प्रकार है जिसका वर्णन उपर्युक्त **भक्तमाल के छप्पय** से भी स्पष्ट हो जाता है--

एक बार आप सन्त मण्डली सहित भ्रमण करते हुये चटथावल नामक ग्राम में जो कि काश्मीर जम्बू के सन्निकट पहुँचे, वहाँ एक बहुत सुन्दर बाग और उसके समीप एक देवी का मठ था। जल जङ्गल की सुविधा देख आप एकान्त में वहीं ठहर गये। थोड़ी देर पश्चात् क्या देखते हैं कि देवी के मठ में पशु बलि (बकरे की बलिदान) की तैय्यारी हो रही है, यह देखकर आपको बड़ी ग्लानि हुई और सन्त मण्डली सहित आपने उस दिन भोजन नहीं पाया। यह भागवतापराध देवी से सहन नहीं हुआ। वह स्वयं आचार्यश्री की सेवा में पहुँच भोजन करने की प्रार्थना की तथा महाराजश्री से कन्या का स्वरूप धारण कर वैष्णवी दीक्षा ग्रहण कर वहाँ के मुखिया जागीरदार को भी ग्राम सहित आचार्यश्री का शिष्य बनवाकर वैष्णवी दीक्षा दिलवाई और सदा के लिए अपने यहाँ पशु बलि का निषेध कर मिष्ठान्न प्रसाद बनवा कर नैवेद्य लगाने का आदेश दिया। जो जम्बू क्षेत्र में वैष्णवीदेवी नाम से परम विख्यात है। लाखों भगवज्जन वैष्णवीदेवी के दर्शनार्थ वहाँ श्रद्धा के साथ पहुँचते हैं।

शिष्य परम्परा--

श्रीरसिकराजराजेश्वर महावाणीकार नित्यनिकुञ्जेश्वर युगलकिशोर श्रीश्यामाश्याम की नित्य विहारमयी लीलाओं के उज्ज्वल रसोपासक प्रबल प्रतापी परमयशस्वी ख्यातनामा अनन्त श्रीविभूषित जगद्‌गुरु निम्बार्काचार्य रसिक-राजराजेश्वर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के मुख्यतया १२॥ साडे बारह शिष्य थे। जिनमें आधे में श्रीवैष्णवी देवी थी। इनमें आचार्य पीठ पर आचार्यश्री ने शिष्य परिकर में अपने कृपा पात्र श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज को ही अभिषिक्त किया। साथ ही अपनी निजी सेवा, पूर्वाचार्यों द्वारा परम्परागत श्रीसनकादि संसेव्य शालग्राम विग्रह स्वरूप ठाकुर श्रीसर्वेश्वर प्रभु (आराध्यदेव) की सेवा भी प्रदान की।

तत्पश्चात् अन्य शिष्यों ने भी अपने प्रखर वैदुष्य दिव्य प्रतिभा तथा त्याग तपस्या द्वारा भक्ति का प्रचार-प्रसार करते हुये जहाँ-तहाँ मठ, मन्दिरों की संस्थापना की जो सम्प्रदाय में परम प्रसिद्ध हैं। वे भी बड़े-बड़े विशाल मठ, मन्दिर अति दर्शनीय हैं। इस प्रकार श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज एवं उनके शिष्य--प्रशिष्यों द्वारा भारत में सर्वत्र भक्ति पूर्ण वैष्णव धर्म का बहुत ही सुन्दर प्रचार-प्रसार हुआ।

आचार्यवर्य हरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के साडे बारह शिष्यों का नामोल्लेख अनन्त श्रीविभूषित जगद्‌गुरु निम्बार्काचार्य श्रीनारायणदेवाचार्यजी महाराज ने स्वनिर्मित **श्रीआचार्य चरितम्** नामक ग्रन्थ के १४ वें विश्राम के अन्त में श्लोक संख्या ४३ के अन्तर्गत किया है।

आपसे भी पूर्व स्वामी श्रीरूपरसिकदेवजी महाराज ने अपने स्वरचित **श्रीहरिव्यासयशामृत** ग्रन्थ में भी साडे बारह शिष्यों का उल्लेख किया है। उक्त ग्रन्थ



अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्री निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर रसिकराजराजेश्वर महावाणीकार श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज अपने द्वादश शिष्यों को उपदेश प्रदान करते हुए।

में श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज को ही अखिल भारतीय निम्बार्काचार्यपीठ पर श्रीसनकादि संसेव्य श्रीसर्वेश्वर प्रभु सेवा सहित समासीन होने का स्पष्ट भाव वर्णित किया हुआ है । आचार्यप्रवर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ने श्रीपरशु-रामदेवाचार्यजी को ही श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के आचार्यपद पर सुशोभित किया जिसके अति प्राचीन अर्वाचीन अनेकानेक प्रमाण विद्यमान हैं विस्तार भय से यहाँ उद्धृत करना उपयुक्त नहीं समझा गया । श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के अतिरिक्त आपके साडे एकादश गुरु भ्राताओं की संख्या इस प्रकार है--श्रीमत्स्वभूदेवाचार्यजी, श्रीवोहितदेवाचार्यजी, श्रीमदनगोपालदेवजी (घमण्ड), श्रीउद्धवदेवाचार्यजी, श्रीवाहुबलदेवाचार्यजी, श्रीगोपालदेवाचार्यजी, श्रीहृषीकेशदेवाचार्यजी, श्रीमाधवदेवाचार्यजी, श्रीकेशवदेवाचार्यजी, श्री (लापर) गोपालदेवाचार्यजी, श्री-मुकुन्ददेवाचार्यजी, आधे में श्रीवैष्णवीदेवीजी । श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के श्रीवैष्णवीदेवी के अतिरिक्त ये उपर्युक्त द्वादश शिष्य सभी आदि गौड़ ब्राह्मण थे । श्रीहरिव्यासयशामृत ग्रन्थ के प्रणेता स्वामी श्रीरूपरसिकदेवजी भी इन्हीं आचार्यवर्य के कृपापात्र शिष्य थे। जिन्होंने और भी ग्रंथों की सरस और प्रामाणिक रचना की है।

पूर्वोक्त भगवती देवी तभी से काश्मीर जम्बू के सन्निकट वैष्णव देवी के नाम से प्रसिद्ध है । जहाँ जीव-हिंसात्मक बली न होकर सात्त्विक मिष्ठान्न-फलादि भोग ही समर्पित किये जाते हैं ।

इसी प्रकार रसिक राजराजेश्वर जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीहरिव्यास-देवाचार्यजी महाराज की ख्याति देश में सर्वत्र हो गई थी । आज भी इस सम्प्रदाय के लोग एवं सन्तजन जहाँ-तहाँ अपने आपको **हरिव्यासी** के नाम से कहा करते हैं । आपका पाटोत्सव कार्तिक कृष्ण १२ (द्वादशी) को मनाया जाता है ।

सखी भाव की उपासना में आप **श्रीहरिप्रिया** सहचरी के नाम से प्रसिद्ध हैं । आपके द्वारा रचित **श्रीमहावाणी** के पदों में श्रीहरिप्रिया शब्द का ही प्रयोग किया गया है । श्रीमहावाणी श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय की अमूल्य निधि है। इसमें आपने श्रीप्रिया-प्रियतम की नित्यनिकुञ्जोपासना में सखी भाव को ही मान्यता प्रदान की है। जैसे-

प्रातः कालहि ऊठिके, धार सखी को भाव ।
जाय मिले निज रूप में, याकौ यहै उपाव ॥

आपश्री ने महावाणीजी में जिस दिव्य निकुञ्ज रस का जो वर्णन किया है वह अन्यत्र मिलना अति कठिन है । **श्रीमहावाणीजी** के प्रारम्भ में वन्दनात्मक **सखीनाम-रत्नावली** स्तोत्र है वह संस्कृत में इतना अनुपम ललित और सरस है जो नित्य पठनीय है । इसी प्रकार **श्रीमहावाणीजी** के प्रत्येक सुख के प्रारम्भ में देववाणी में ही मङ्गल रूप श्लोक अत्यन्त मञ्जुल हैं ।

(३६) आचार्यवर्य श्रीपरशुरामदेवाचार्य

यः संजहार पदकंजमधुव्रतानां, कामादिहैहयकुलं निजबोधवाणैः ।
वन्दे च तं परशुराममहं द्वितीयं, विद्याविरागपरमं कृपयावतीर्णम् ॥

ज्यों चन्दन को पवन निम्ब पुनि चन्दन करई ।
बहुत कालतम निविड़ उदै दीपक ज्यों हरई ॥
श्रीभट्ट पुनि हरिव्यास सन्त मारग अनुसरई ।
कथा कीरतन नेम रसन हरिगुन उचरई ॥
गोविन्द भक्ति गद रोग गति तिलक दाम सद वैदहद ।
जंगली देश के लोग सब श्रीपरशुराम किये पारषद ॥
(भक्तमाल)

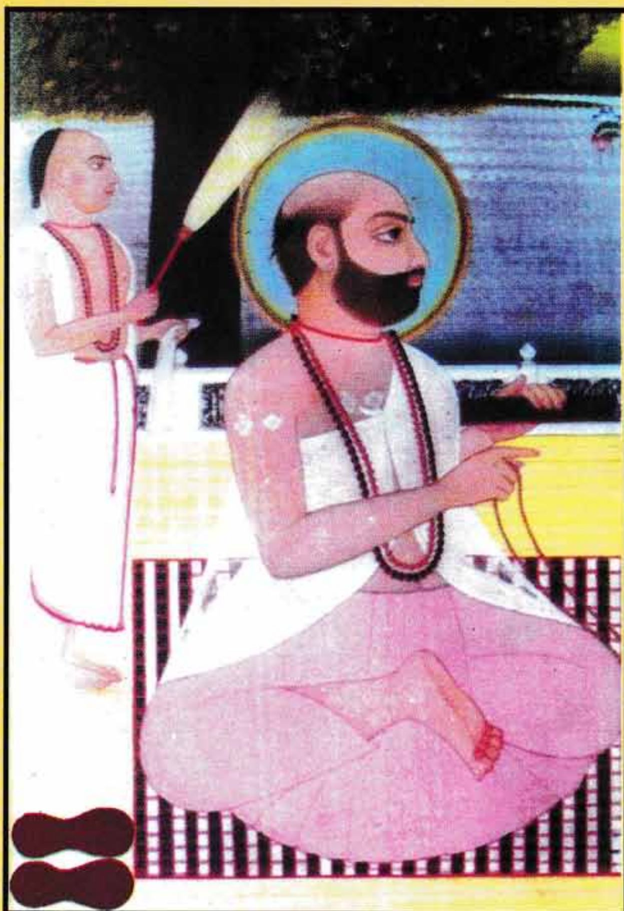
परिचय--

आचार्यवर्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के पश्चात् आचार्य पद पर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज अभिषिक्त हुये ।इनका समय पन्द्रहवीं शताब्दी है। वि० सं० १५१४ से लेकर वि० सं० १६६४ तक आप आचार्यपीठासीन रहे । ये बड़े ही प्रतिभा सम्पन्न उच्च कोटि के परम सिद्ध आचार्य थे । इनकी कीर्ति और महिमा सर्वत्र फैली हुई थी । इन्होंने अपने श्रीगुरुदेव के आदेश से **पद्मपुराण** में परिवर्णित **निम्बार्कतीर्थ** नामक परम पावन मरुस्थल में पुष्कर क्षेत्र के समीप एक मस्तिंगशाह नामक यवन फकीर को परास्त कर वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार किया।

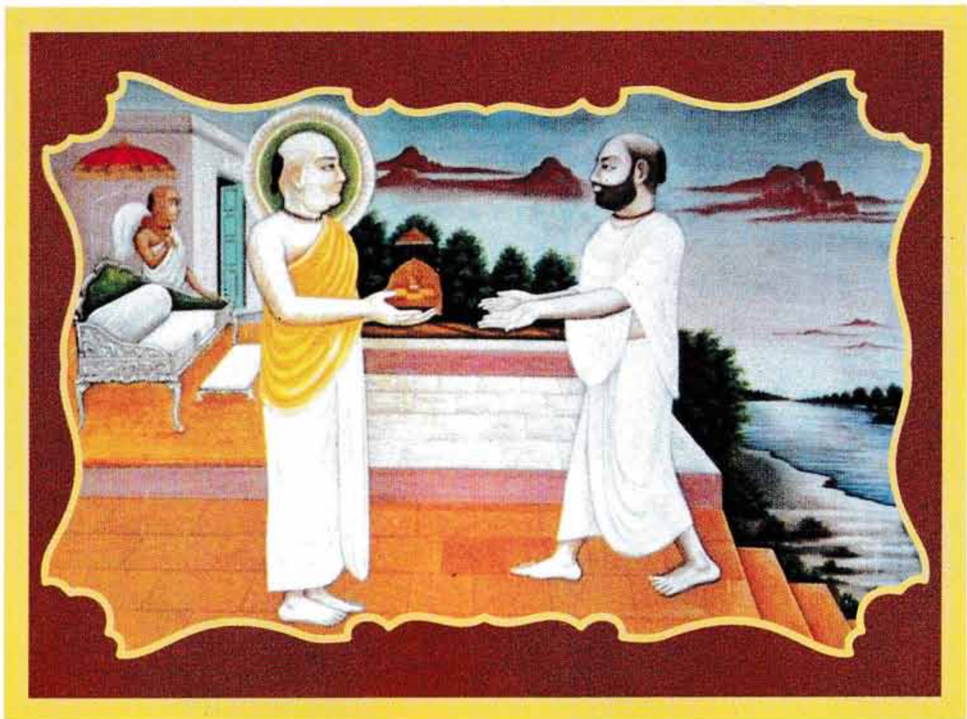
जहाँ पर आजकल श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ स्थित है, वह स्थान आज से पाँच सौ वर्ष पूर्व भयंकर बीहड़ वन था । उस जंगल में एक प्राचीन परम मनोरम अति सुन्दर जल पुष्प और लता वृक्षों से समन्वित आश्रम था, जिस आश्रम को एक पैशाचिक सिद्धि सम्पन्न दुष्ट यवन फकीर मस्तिंगशाह ने अपने आधिपत्य में कर लिया था । उस आश्रम के सन्निकट होकर ही पुष्कर एवं द्वारका धाम जाने का प्रधान मार्ग था। यह मदान्ध फकीर उस मार्ग से जो कोई धार्मिक जन यात्रा के लिये निकलता तो उन्हें बड़ा ही दुःख पहुँचाया करता था । एक समय कुछ साधु सन्त महात्मा इसी मार्ग से द्वारका धाम को जा रहे थे । जब ये फकीर के निवास स्थान के सन्निकट पहुँचे तो फकीर ने इन सभी को अपनी पैशाचिक सिद्धि के बल पर रोक लिया और विभिन्न प्रकार का उनके साथ दुर्व्यवहार करते हुये व्यथित किया, जिससे

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।





ब्रजप्रदेश से मरु प्रदेशस्थ पुष्कर क्षेत्रीय निम्बार्कतीर्थस्थ–
अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के संस्थापक आचार्यवर्य
वाणी ग्रन्थकार श्री परशुरामदेवाचार्यजी (श्री स्वामीजी) महाराज



कालिन्द गिरि नन्दिनी श्रीकृष्ण प्रिया श्रीयमुना तटवर्ती अपने स्थान श्रीनारद टीला पर श्रीहरिव्यासदेवाचार्य जी महाराज श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी को श्री सर्वेश्वर प्रभु की सेवा समर्पण करते हुए।

सन्तों को महान् कष्ट हुआ। जैसे-तैसे उस नर पिशाच से सुरक्षित बचकर वे वहाँ से लौट पड़े और मथुरापुरी में श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के सन्निकट पहुँच कर उस यवन फकीर द्वारा किये गये दुष्कृत्यों का सम्पूर्ण वृत्तान्त श्रवण कराया। श्रीचरणों को यह जानकर बड़ा ही दुःख हुआ। आपने अपने कृपापात्र (शिष्य) श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी को आदेश दिया कि तुम उस दुष्ट यवन को जाकर परास्त करो। कारण तुम्हारे में उसको परास्त करने का सम्पूर्ण सामर्थ्य एवं सिद्धि बल भी है। आचार्यश्री की आज्ञा पाकर कुछ सन्तों को साथ लेकर श्रीपरशुरामदेवजी ने उस यवन फकीर को परास्त करने एवं साधु-महात्माओं के तथा धर्मप्राण जनता के दुःख दूर करने और वैष्णव धर्म के प्रचार निमित्त प्रस्थान किया। सर्वप्रथम तीर्थगुरु श्रीपुष्करराज पहुँच कर स्नान किया। वह यवन यहाँ से १२ कोस की दूरी पर रहता था। एक दिन सन्त मण्डली सहित वहाँ पहुँच गये जहाँ पर वह सन्त द्रोही दुष्ट फकीर था। आये हुये सन्तों को देख वह यवन फकीर अपनी सिद्धियों द्वारा सबको मूर्छित करना चाहा, किन्तु कई बार प्रयोग करने पर भी वह सफल नहीं हो पाया। साथ ही उसके सम्पूर्ण देह में विद्युत् प्रहार की भाँति जलन पैदा होने लगी। उस यवन के पास तीन पैशाचिक सिद्धियाँ थी। जिनको श्रीपरशुरामदेवजी महाराज ने क्रमशः हरण करली। जब उसने सभी प्रकार से अपने आपको असहाय एवं असमर्थ पाया तो करुण क्रन्दन कर क्षमा याचना करने लगा। बहुत अनुनय विनय करने के अनन्तर श्रीचरणों ने उसे क्षमा करके अन्यत्र चले जाने को कहा। आज्ञानुसार उसने वैसा ही किया। वहाँ से चला गया, किन्तु अन्तिम समय में उसने फिर वहीं आकर अपने शरीर का इस आश्रम से कुछ दूर पर अन्त किया। जिसकी कब्र अद्यावधि श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) से कुछ दूरी पर दक्षिण दिशा में विद्यमान है। वह यवन पीछे परम भगवद्भक्त हो गया था।

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज ने द्वारका धाम के मार्ग को निष्कण्टक बना कर इस भयंकर मरुस्थल प्रदेश (रेतीले स्थान) में वैष्णव धर्म का प्रचार करते हुए श्रीनिम्बार्कतीर्थ में कुछ दिन पर्यन्त निवास कर पुनः मथुरापुरी की ओर गमन किया। श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ने इनके कार्यकौशल तथा सिद्धि बल के प्रभाव को देख कर परम प्रसन्नता प्रकट की और सब प्रकार से योग्य समझ कर इन्हें अपने पद पर प्रतिष्ठित करके तथा भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा देकर अन्तिम बार यही आदेश प्रदान किया कि उसी मरुस्थल प्रदेश में जाकर वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार करो। श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज पुनश्च श्रीसर्वेश्वर प्रभु की

सेवा सहित श्रीआचार्यवर्य के आदेशानुसार मरुस्थल प्रदेश में आकर भगवद्भक्ति की गङ्गा बहाने लगे । ये कभी-कभी अपने निवास स्थान से पुष्कर जाकर अनेक दिवस पर्यन्त नागेश्वर पर्वत की कन्दराओं में भी निवास करते और फिर अपने आश्रम आ जाते । इन्होंने अपने निवास स्थान के लिए किसी भी प्रकार से आवास का निर्माण नहीं किया केवल एक पीलू वृक्ष के नीचे रहकर तपश्चर्या धूनी (हवनकुण्ड) पर श्रीयुगल आराधना करते थे । इनका निर्मित **परशुराम सागर** नामक विशाल ग्रन्थ है । इसकी रचना दोहे, चौपाई, छन्द, वरवा, छप्पय और पद आदि अनेक छन्दों में हुई है । यह विशाल ग्रन्थ ४ भागों में प्रकाशित हुआ है । इसका सम्पादन विद्वद्वर डा० श्रीरामप्रसादजी शर्मा एम. ए., पी. एच. डी. पूर्वप्रवक्ता राजकीय महाविद्यालय किशनगढ (राजस्थान) ने किया है । यह ग्रन्थ परम उपादेय मननं करने योग्य है, छपाई-सफाई चित्ताकर्षक है ।

इन श्रीआचार्य चरण ने यवनों के प्रबलतम आक्रमण के समय, जबकि इन दुष्ट यवनों ने सम्पूर्ण भारत को अपने आधिपत्य में कर लिया था, और हिन्दू जनता को विविध प्रकार से दुःखित करते थे, मन्दिरों को ध्वस्त तथा देव मूर्तियों को खण्डित करते थे । सर्वत्र यावनीय बर्बरता ने त्राहि-त्राहि मचवा दिया था, तब इन दुष्टों को जहाँ-तहाँ सर्व प्रकार से परास्त कर वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार कर हिन्दू जनता का कल्याण किया । आचार्यश्री ने जन-कल्याणार्थ सदा के लिए पुष्कर क्षेत्र में ही निवास किया । कभी आप पुष्कर निवास करते तो कभी श्रीनिम्बार्कतीर्थ तथा कभी अन्यान्य प्रान्तों में परिभ्रमण कर सनातन धर्म का उत्थान करते ।

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के अनेक चरित्र मिलते हैं जो कि श्रीसर्वेश्वर प्रभु से सम्बन्धित पूर्ण हैं । उदाहरणार्थ एक दो चरित्र नीचे दिये जा रहे हैं--

एक समय शेरशाहसूरी बादशाह अपने कोई सन्तति (पुत्र) न होने से पुत्र प्राप्ति के लिए अजमेर ख्वाजा की यात्रार्थ आया हुआ था । परन्तु विविध उपायों के करने पर भी वह पुत्र रत्न से वञ्चित ही रहा । उस समय बादशाह की सेना में जोधपुर राज्यान्तर्गत खेजडला ग्राम के प्रसिद्ध ठाकुर श्रीशियोजी भाटी सरदार सेनापति थे और इधर ये श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के परम्परागत शिष्य भी थे । इन्होंने एक दिन बादशाह से निवेदन किया कि आप यदि हमारे श्रीगुरुदेव से अभ्यर्थना करें तो अभिलाषा पूर्ति हो । यहाँ अजमेर से दश कोस की दूरी पर ही वे एकान्त

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



व्रजप्रदेश से मरु प्रदेशस्थ पुष्कर क्षेत्रीय निम्बार्कतीर्थस्थ–
अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के संस्थापक आचार्यवर्य
वाणी ग्रन्थकार श्री परशुरामदेवाचार्यजी (श्री स्वामीजी) महाराज

जंगल में तपश्चर्या करते हैं । उनकी यदि अनुकम्पा हो जाय तो निःसन्देह पुत्र प्राप्ति हो सकती है । बादशाह ने सहर्ष स्वीकार किया, और शीघ्र ही आकर आचार्यवर्य्य के दर्शन किये । बादशाह ने प्रणाम करते समय एक बहुमूल्य परिधान वस्त्र (दुशाला) समर्पित किया जिसे आचार्य-चरण ने उस बहुमूल्य वस्त्र को चिमटा से पकड़ कर प्रज्वलित धूनी में प्रवेश कर दिया । बादशाह का वस्त्र जब जलकर भस्म होता दिखाई दिया तो उसके मन में नाना भाँति की कुतर्क भावनायें उठने लगी तब आचार्यश्री ने इसकी मानसिक भावना जानकर प्रज्वलित धूनी में से उसी प्रकार के सैंकडों दुशाले चिमटा से निकाल-निकाल बाहर एकत्रित कर दिये, और बादशाह से कहा तू दुःखी मत हो तेरा इसमें से जो वस्त्र हो उसे उठा ले जा । हमारा तो यही खजाना है । आता है जो इसमें रख देते हैं । बादशाह ने जब यह अलौकिक विचित्र चमत्कार देखा तो उसके आश्चर्य का पारावार नहीं रहा और अपने कुत्सित विचारों पर पश्चाताप करता हुआ श्रीचरणों से क्षमा प्रार्थना करने लगा । आचार्यपाद ने विनय करने पर उसे क्षमा प्रदान की । तदनन्तर बादशाह ने पुत्र प्राप्ति के लिए आपसे प्रार्थना की । आपने कहा पुत्र प्रदाता तो भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु ही हैं, जाओ । तब भाटी सरदार श्रीसियोजी ने इशारा किया कि चलिये । नमन करके बादशाह अपनी अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त कर पुनः अपने स्थान को चला गया । जब उसके पुत्र हो गया तो उसका नाम रखा सलीमशाह । फिर श्रीआचार्यचरणों की सन्निधि में आकर सेवा के लिए प्रार्थना करने लगा । आपने बहुत प्रकार से प्रार्थना करने पर भी कुछ अङ्गीकार नहीं किया । बादशाह यह नहीं जानता था कि इनके समक्ष मेरा वैभव तुच्छातितुच्छ तृण सदृश भी नहीं है । अन्त में उसने एक नगर निर्माण के लिए प्रार्थना की और कहा कि उस नगर का नाम मेरे पुत्र के नाम से विख्यात हो । विविध भाँति से प्रार्थना करने पर आपने इसे स्वीकार कर लिया । बादशाह जब जाने लगा तो गायों के चरने के लिए ६ हजार बीघा जमीन समर्पित की । बादशाह के पुत्र के नाम से उस स्थान का नाम सलेमाबाद पड़ा, यद्यपि इसका पौराणिक नाम निम्बार्कतीर्थ ही प्रसिद्ध है ।

अभी भी आपके समय-समय पर प्रत्यक्ष रूप से भक्तजनों को दर्शन होते रहते हैं । उसी समय से आपके भजन स्थान पर अब भी वह स्थान जिसको धूनी कहते हैं वहाँ श्रीस्वामीजी महाराज एवं धूनी का नित्य अर्चन पूजन होता है । वह स्थान परम मनोहर एवं दर्शनीय है । वर्तमान आचार्यश्री ने इसको और भी चित्ताकर्षक बनवा दिया है जहाँ के दर्शन कर दर्शकों का चित्त अत्यन्त भाव विभोर हो जाता है।

धूनी की विभूति लेकर अनेक भक्तजन अपने कष्टों की निवृत्ति तथा मनोवाञ्छित फल प्राप्त करते हैं । आपके अनेकों ही अलौकिक विलक्षण चमत्कार हैं उनके सम्बन्ध में कहाँ तक लिखा जाय। केवल एक दो घटनाओं का वृतान्त नीचे दिया जा रहा है।

(१) एक बार एक भगवतत्त्व-जिज्ञासु ब्राह्मणकुमार घर-बार छोड़ एक ज्ञान मार्गी गुरु की शरण में पहुँचा और बहुत वर्षों तक ज्ञान प्राप्त करता रहा, किन्तु आत्म तुष्टि न होने के कारण आचार्यवर्य्य श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज की चरण-शरण ली । तब आपने भी उसको पञ्च-संस्कार युक्त वैष्णवी दीक्षा देकर भगवत्तत्व का सदुपदेश दिया । इस ज्ञान को पाकर उसे परम शान्ति की प्राप्ति हुई । आपकी सत्कृपा ने कालान्तर में जाकर उस ब्राह्मण को एक उच्च कोटि का सन्त बना दिया। आगे चलकर यही महात्मा श्रीतत्त्ववेत्ताचार्यजी के नाम से विख्यात हुए ।

एक दिन आपने उसको सब प्रकार से योग्य जान यह आज्ञा दी कि तुम इस मारवाड़ प्रदेश में ही भ्रमण कर वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार करो । आपकी आज्ञा पाकर वे भी धर्म प्रचारार्थ भ्रमण करते हुए एक दिन, पूर्व शिक्षा गुरु के आश्रम में जा पहुँचे । उन्होंने इनको इस प्रकार वैष्णवी चिह्नों से चिह्नित देख कर कहा कि यह क्या किया ? तब उसने भी अपने मन का समस्त अभिप्राय प्रकट किया और कहा कि वास्तविक आत्म शान्ति वैष्णव भक्ति मार्ग में ही हैं ।

उनका अभिप्राय सुन कर उन शिक्षा गुरु ने उनको एक जल से पूर्ण कुम्भ (जल भरा हुआ घड़ा) देकर कहा कि जाओ अपने गुरु के पास इसको विना कहे सुने ही उनके समक्ष धर देना । इन्होंने वैसा ही किया । उस गुरु का अभिप्राय था कि मैंने इसको पहिले ही पूर्ण बना दिया तब फिर आपने इसमें क्या विशेषता की ? श्रीचरणों ने भी उसके अभिप्राय को जानकर सेर भर बतासे मंगवाये और श्रीसर्वेश्वर प्रभु का नाम स्मरण करते हुए शनैः शनैः क्रमशः एक एक करके उसमें छोड़ दिये । सब बतासे पानी में घुल मिल गये तब महाराजश्री ने उन्हीं के द्वारा उस घड़े को वहाँ भेज दिया और यह कह दिया कि तुम भी उनसे कुछ न कहना । केवल जाकर उनके सामने रख देना । उन्होंने वैसा ही किया । आपका अभिप्राय भी यह था कि आपने इसको पूर्ण बना दिया किन्तु रस नहीं था हमने इसमें मधुरता प्रकट कर दी । इस भाव को जानकर वे महात्मा बड़े प्रसन्न हुए । वे ही तत्त्व जिज्ञासु परम मेधावी ब्राह्मण आचार्यश्री के आश्रम में आकर पहिले की भाँति निवास करने लगे। एक दिन

आपने कहा कि तुमने भगवत्तत्त्व को जान लिया है, अतः आज से तुम्हारा नाम संसार में तत्त्ववेत्ता के नाम से ही प्रसिद्ध होगा ।

(२) एक बार एक सन्त ने आपके यहाँ छत्र, चँवर, हाथी, घोड़े, रथ, पालकी और सोने चाँदी के पात्र आदि देखकर कहा कि आप तो प्रपंच (माया) से घिरे हुए हैं । महात्माओं का ऐसा स्वरूप क्यों ?

तब उससे आपने विनम्र शब्दों में कहा कि भाई ! क्या करें हमने तो माया को सर्वथा त्याग दिया है, किन्तु यह नटनी ऐसी है कि हमारे पीछे-पीछे चली आती है ।

उसने कहा कि यह कैसे जाना जाय । इसकी तो परीक्षा हो तभी यथार्थता का ज्ञान हो । यह बात सुन आप उसी समय समस्त वैभव को छोड़ श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा तथा एक दो शिष्यों को साथ लेकर पुष्करस्थ नाग पहाड़ की कन्दरा में जाकर निवास करने लगे ।

आपको वहाँ गये एक सप्ताह भी नहीं हो पाया था कि एक दिन प्रातःकाल जब श्रीसर्वेश्वर प्रभु की श्रृङ्गार आरती हो रही थी तब उधर से एक बड़ा भारी व्यापारी (लखी बनजारा) धन सम्पत्ति से युक्त अपने परिजन के साथ निकला । वह परम वैष्णव था । उसका यह नियम था कि जहाँ कहीं भी हो भगवान् के दर्शन करके भोजन पाना । उसने झालर-घण्टे की आवाज सुनी और कहा कि देखो यहाँ भगवान् का मन्दिर है, चलो दर्शन कर आवें और भोजन पा लें, फिर चलेंगे ऐसा कह कर वहाँ ही पड़ाव डाल दिया ।

जब वह दर्शन करने के लिए पहुँचा तो भगवान् श्रीसर्वेश्वर और साथ ही अपने गुरुदेव (श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज) के दर्शन कर परम प्रसन्न हुआ । उसके हर्ष का ठिकाना न रहा । उसने कहा कि आज मेरे अहो भाग्य हैं जो भगवान् श्रीसर्वेश्वर और पूज्य श्रीगुरुदेव के दर्शन हुये । उसने अपनी सम्पत्ति में से बहुत सम्पत्ति भगवान् और श्रीगुरुदेव के भेंट कर दी तथा उस दिन का भोग प्रसाद (थाल) भी अपनी ओर से ही करवाया । विपुल मात्रा में वैष्णव सेवा हो रही थी कि उसी समय वह परीक्षार्थी सन्त भी जो कि परीक्षा हेतु साथ ही रह रहे थे, उन्होंने वहाँ की

भाँति यहाँ भी पूर्ण वैभव देखा तो अपने मन में बहुत लज्जित हुए और श्रीआचार्यचरणों में गिरकर अपने वचनों को वापिस लेते हुए क्षमा मांगी ! सच है भगवान् के जो सच्चे भक्त हैं, माया उनके पीछे-पीछे दासी की भाँति स्वयं दौड़ा करती है ।

विश्व विख्यात परम भक्तिमती श्रीमीरांबाई ने आपश्री से ही मन्त्रोपदेश एवं श्रीगिरिधरगोपाल की प्रतिमा प्राप्त की थी । सम्प्रति श्रीमीरांबाई के वे ही भगवद्विग्रह श्रीगिरिधरगोपालजी श्रीपुष्कर में श्रीपरशुरामद्वारा स्थान में अद्यावधि सुशोभित हैं ।

इनका जयन्ती महोत्सव भाद्रपद कृष्णा ५ (पञ्चमी) का है । यह उत्सव श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में बड़े समारोह के साथ मनाया जाता है । अन्यत्र वृन्दावन, जयपुर आदि अनेक स्थलों पर भी यह उत्सव बहुत सुन्दर रूप से सम्पन्न होता है । निम्बार्कतीर्थ में इस जयन्ती महोत्सव के दिवस को समस्त जन समुदाय श्रीस्वामीजी की पञ्चमी अथवा गुरुपञ्चमी के नाम से बोलते हैं ।

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ का श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी महोत्सव बहुत प्रसिद्ध है । यह आयोजन प्रतिवर्ष भाद्रपद कृष्ण प्रतिपदा से लेकर भाद्रपद कृष्णा ९ (नवमी) पर्यन्त अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्री श्रीजी महाराज के तत्त्वावधान में बड़े ही समारोह पूर्वक मनाया जाता है, जिसमें श्रीमद्भागवत सप्ताह प्रवचन, श्रीरासलीलानुकरण, श्रीस्वामीजी महाराज की जयन्ती, श्रीकृष्ण जन्मोत्सव, नन्द महोत्सव आदि के साथ-साथ बधाई गान, संगीत गोष्ठी, अष्टयाम सेवा, समागत सन्त-महन्त एवं विद्वानों के प्रवचन तथा आचार्यश्री के सदुपदेश आदि-आदि कार्यक्रमों का विशेष आयोजन रहता है--

कृष्णजन्मोत्सवो लोके सर्वमङ्गलदायकः ।
निम्बार्काचार्यपीठे स द्रष्टव्यः प्रीतिपूर्वकम् ॥



।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



आचार्यवर्य श्रीहरिवंशदेवाचार्य

(३७) आचार्यवर्य श्रीहरिवंशदेवाचार्य

सर्वेश्वरं समाश्रित्य जीवा अभयमाप्नुयुः ।
एवं दिशन् हरिवंशदेवाचार्यो जयत्विह ॥

परिचय--

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) के संस्थापक अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के पश्चात् श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर आसीन हुये । वि० सं० १६६४ से लेकर वि० सं० १७०० तक आप आचार्यपीठासीन रहे । आप श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के शिष्यों में प्रमुख थे । आचार्यश्री से वैष्णवी-दीक्षा लेकर तीर्थ पर बहुत दिनों तक मन्त्र-जप आदि निरन्तर भगवत् आराधना करते रहे । अन्तर्यामी श्रीराधासर्वेश्वर भगवान् की आन्तरिक प्रेरणानुसार आपने दैवी जीवों को पाखण्डी मतों से सावधान किया । जो कुछ मानसिक भाव उद्बुद्ध होते, उसी प्रकार वाणी से बोलते और तदनुसार शारीरिक क्रियायें करते अतः **मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्** के आदर्श माने जाते थे । श्रीसर्वेश्वर प्रभु की आराधना में ही तन्मय रहने से जनता भी आपको तद्रूप ही देखती थी । आपके दर्शनमात्र से बहुत से सज्जन रसिक-भक्त बन गये । बड़े-बड़े नास्तिक भी आदर्श आस्तिक बन गये ।

कृष्णगढ नरेश महाराजा श्रीराजसिंहजी की राजकुमारी एवं महाराजा श्रीनागरीदासजी की लघु भतीजी श्रीसुन्दरकुँवरीजी ने श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी के प्रसंग में लिखा है--

ऐसे बहुत प्रभाव के परशुरामजू जान ।
जिनके मुख सिषि हुव सखी हित अलवेलिजू आन ॥
श्रीहरिवंश सुदेव सों जग आचार्य सरूप ।
जिनतैं निर अन्तर रहैं जुगल इच्छ्य इन जूप ॥

(मित्रशिक्षा १७ वां विश्राम)

जयपुर के विशिष्ट कविराज भट्ट पण्डित श्रीमंडनजी ने परम्परागत श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज की संक्षिप्त जीवनी का उल्लेख किया था । राजा-महाराजा द्वारा आमन्त्रण आने पर भी श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी श्रीनिम्बार्कतीर्थ एवं

श्रीधाम वृन्दावन को छोड़कर इधर-उधर नहीं आते-जाते थे । श्रीसर्वेश्वर प्रभु की आराधना में ही तल्लीन रहते थे, आपके शिष्य-प्रशिष्य भी अनेकों की संख्या में थे । उनमें श्रीनारायणदेवाचार्य प्रमुख थे । उन्होंने गोविन्दकुण्ड (आन्योर) स्थित प्राचीन श्रीगोविन्ददेव मन्दिर में अपने गुरुदेव श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज का अभूतपूर्व स्मृति-महोत्सव किया था, यह मंडनजी ने लिखा है--

परशुराम महाराज के, भये देव हरिवंश ।
तिनके नारायण भये, देव देव अवतंश ॥
गोविन्द गोवर्धन निकट, राजत गोविन्द कुण्ड ।
तहाँ लाखन भेले किये, हरिदासन के झुण्ड ॥
किय नारायणदेव ने, मेला जग जस छाय ।
धन जामें दशवीश लख, दीन्हें तुरत लगाय ॥

(भट्ट मण्डन कवि कृत जयसाह सुजस प्रकाश)

आचार्यप्रवर श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज विशेषत: श्रीवृन्दावन यहाँ से पधारते थे और अधिक समय वहाँ विराजते रहे हैं । आपकी श्रीधाम में अद्भुत निष्ठा थी । आपका तिरोधान भी श्रीवृन्दावन में ही हुआ । श्रीयमुनाजी के तट पर विहार घाट वाली कुञ्ज जो आचार्यपीठ की समस्त कुञ्जों में अतिप्राचीन है । वहीं पर आपकी समाधि एवं चरणपादुकायें विद्यमान है ।

श्रीनारायणदेवाचार्यजी ने निम्नांकित संस्कृत स्तव द्वारा अपने गुरुदेव श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज की जीवनी का दिग्दर्शन कराया है--

हंसाय हंस भूपाय हंसतत्त्वोपदेशिने ।
श्रीहरिवंशदेवाय नमस्ते युग्म - रूपिणे ॥१॥
हितवल्ली महामाया महेशी युग्म-रूपिणी ।
राधाकृष्णात्मिका सेव्या सदा तस्यै नमोनमः ॥२॥
पतितानां पावनाय सदाचार - प्रवर्तिने ।
सर्वभक्ताधिराजाय हरिवंशाय ते नमः ॥३॥
भूमिपाषण्डनाशाय प्रेमभक्ति - प्रवर्तिने ।
महामोह विनाशाय हरिवंशाय ते नमः ॥४॥
सनकादिस्वरूपाय नमो नारदरूपिणे ।
निम्बादित्याय चक्राय हरिवंशाय ते नमः ॥५॥

अखण्डमण्डलाचार्य-वर्य्याय महते नमः ।
नमः प्रेम-समुद्राय सूरये गुरवे नमः ॥६ ॥
श्रीहरिव्यासरूपाय श्रीवृन्दावनचारिणे ।
श्रीहरिवंशदेवाय नमस्तेऽस्तु भविष्णवे ॥७ ॥
विरोधमतनाशाय चाविरोधप्रवर्तिने ।
चित्स्वरूपाय नित्याय हरिवंशाय ते नमः ॥८ ॥

इति श्रीमन्नारायणदेवेन कृतं श्रीहरिवंशदेवस्य स्तवं समाप्तम् ।
(स्तव स्मरणी वि० सं० १८५५ में श्रीराधिकादास लिखित)

वि० सं० १७०० तक आप जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पीठासीन रहे । श्रीहंस, सनकादि, श्रीनारद, श्रीनिम्बार्क, श्रीहरिव्यासदेव आदि सभी आचार्य--

आचार्य मां विजानीयान्नावमन्येत्कर्हिचित् ।
न मर्त्यबुद्ध्याऽसूयेत सर्वदेवमयो गुरुः ॥

--के अनुसार श्रीभगवत्स्वरूप माने जाते हैं । सभी का आविर्भाव लोक हित के लिए होता है । आपके द्वारा भी अनुपम लोकहित हुआ है । स्वयं मधुर रस में सरावोर रहकर अधिकारी साधकों को आपने रसोपासना में प्रवृत्त किया । रहस्य परम्परा में हित अलवेली नाम से आप प्रख्यात हैं । आपका चरित्र अगाध है ।

एक बार जब श्रीपुष्कराज से वृन्दावन पधार रहे थे, मार्ग में श्रीगिरिराज गोवर्धन के दर्शनों की अभिलाषा उत्पन्न हो आयी । अतः भरतपुर से गोवर्धन की ओर चल दिये । उन्होंने वहाँ देखा कि एक युवक को बहुत से व्यक्ति बाँधकर लिये जा रहे हैं । युवक अनर्गल बक रहा था और अपने को छुड़ाने के प्रयत्न में दूसरे व्यक्तियों को कभी नोंच रहा था और कभी काट रहा था उसके साथ एक बुढिया भी थी, जो निरन्तर करुण-क्रन्दन कर रही थी । वह इस युवक की माँ थी ।

इस दृश्य को देखकर आचार्यश्री को दया आ गई । इन्होंने उन व्यक्तियों को रोक कर पूछा--इसे आप लोगों ने क्यों बाँध रखा है ? उन व्यक्तियों ने बताया कि इस पर भूत सवार हो गया है । भूत उतरवाने के लिए हम इसे अघोरी के पास लिए जा रहे हैं ।

आगे बातचीत से आचार्यश्री को यह अवगत हुआ कि यहाँ पास में ही कुछ वर्षों से एक अघोरी बाबा आया है । वह बड़ा चमत्कारी है । ओर-पास के सैकड़ों

आदमियों और औरतों के भूत वह उतार चुका है। वह माँस खाता हैं, मदिरा पीता है, फिर भी गाँव वालों की उसमें बड़ी भारी श्रद्धा है। उन्हें उसके लिए माँस-मदिरा की व्यस्था करनी होती है। बस, और कुछ नहीं उसके छूमन्तर करते ही भूत उतर जाता है।

यदि हम इसका भूत बिना माँस-मदिरा के ही उतार दें, तो तुम्हें कोई ऐतराज है? आचार्यश्री ने मुस्कराते हुए पूछा। इस पर एक व्यक्ति ने उत्तर दिया- ऐतराज तो नहीं है, महाराज! पर यहाँ ओर-पास के गाँवों में तो रोज किसी न किसी पर भूत खेलता है और अघोरी बाबा ही उसका इलाज करते हैं। आप तो रास्तागीर हैं, आज हैं, कल हम आपकी कहाँ तलाश करेंगे। इतना कहकर वे आगे बढने लगे।

आचार्यश्री उन ग्रामवासियों के भोलेपन पर मुग्ध हो गये। कितने सीधे हैं बेचारे। जो जैसे चाहता है, कुछ चमत्कार दिखाकर बहका लेता है। आचार्यश्री ने द्रवीभूत होकर कहा--भाई, इसका भूत तो हम ही उतारेंगे। आगे से तुम चाहे जिससे उतरवाना। इतना कहकर आगे बढे और युवक की रस्सीयाँ खोलकर उसे मुक्त कर दिये। फिर उसके सिर पर हाथ रखकर बोले--यदि मेरी कथनी और करनी एक--सी हो, तो श्रीसर्वेश्वर भगवान् इस युवक की भूतवाधा को नष्ट कर दें।

आचार्यश्री के इतना कहते ही युवक बिल्कुल ठीक हो गया और भूत प्रत्यक्ष हो, सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला--महाराज! मेरा कोई दोष नहीं है। मैं तो अघोरी का गुलाम हूँ। मुझ से वह जो कुछ कहता है, उसे करने के लिए मैं वचन-बद्ध हूँ। मुझे भी मुक्त कराने की कृपा कीजिए।

आचार्यश्री ने सभी व्यक्तियों को वहीं बैठ जाने का आदेश दिया और भूत से कहा--मैं तुमको अघोरी से तो मुक्त करूँगा ही, साथ ही इस योनि से भी छुड़ाऊँगा, किन्तु यह बताओ कि किन कुकर्मों के परिणाम स्वरूप तुम्हें यह योनि प्राप्त हुई है?

भूत ने कहा --महाराज! मैं पहले एक दलाल था। किन्तु धीरे-धीरे मेरी दलाली का काम ठप्प होता गया और नौबत यहाँ तक आ पहुँची कि बाल-बच्चे सूखी रोटियों के लिए भी तरसने लगे। मैंने सोचा कि अब क्या करना चाहिए। मेरे मस्तिक में एक योजना आयी। मैंने एक जीर्णोद्धार समिति का गठन किया। इसमें एक ओर तो ऐसे व्यक्तियों को रखा जो धन से हमारी सहायता कर सकते थे और दूसरी ओर कुछ ऐसे अवारा लोगों को भी लिया, जो अलग होते ही हमारी योजना

का विरोध करके उसे ठप्प कर सकते थे। फिर हम किसी भी मन्दिर--मस्जिद को लक्ष्य करके उसके जीर्णोद्धार के नाम से चन्दा इकट्ठा करने लगे। हमारी योजना सफल रही, कारोबार खूब चला। थोड़ा-बहुत जार्णोद्धार पर भी खर्च किया जाता किन्तु अधिकांश समिति के नये भवनों का निर्माण करने और आमोद-प्रमोद तथा भोग-विलास की वस्तुओं के संकलन में व्यय होता।

जैसे-जैसे समिति के पास पैसा बढता गया, मेरे आचरण बिगड़ते गये। मैंने अपने स्त्री-बच्चों को त्याग दिया, क्योंकि अब गृहस्थ की संकुचित सीमा से बाहर निकल कर समाज के विशाल दायरे में आ गया था। मेरे दिमाग में एक चालाकी आई। क्यों न लगे हाथ अपने आपको भगवान् के भक्तों की श्रेणी में बिठालूँ, मरने के उपरान्त भी नाम रहेगा। मैंने महात्मा जैसा वेश बना लिया, प्रवचन भी करने लगा। समिति की सम्पत्ति और भवनों से भी वैराग्य दिखता, किन्तु मन उस वैराग्य से एक क्षण के लिए भी रँगा नहीं, एक छींट भी उस पर नहीं पड़ी। वह लक्ष्य भी नहीं था। अन्दर से खूब चौकस था मैं। एक-एक पैसे पर निगाह थी, मन भोग-विलासों में फँसा था। चोरी-चोरी संसार के व्यवहार भीतर-ही-भीतर चल रहे थे। बाहर एक उजला परदा था। मैं यही समझता था कि महात्मा होने के लिए यह बाहर का परदा उज्ज्वल, निष्कलङ्क और बेदाग होना चाहिए। पर मेरे अवारा साथी इस उज्ज्वल परदे के भीतर की कालिमा से भी परिचित थे, वे उस गन्दगी और घुटन को भोग रहे थे जिसकी सड़ांद बाहर नहीं आ पाती थी। एक दिन उनमें से एक ने मेरी हत्या करके लाश को जमीन में गाड़ दिया। हंस का बसेरा उजाड़ दिया और तभी से मैं इधर-उधर भटकता रहा हूँ--भूखा, प्यासा, अतृप्त, बेचैन। फिर इस अघोरी ने मुझे कुछ खाने-पीने को दिया, तड़पती आत्मा को कुछ चैन मिला। मैं इसका गुलाम हो गया। अब यहाँ अघोरी के साथ दलाली करते-करते बहुत समय बीत गया है। उसी की चाकरी में रहकर कुछ शौक-मौज कर लेता हूँ। इसने यहाँ अपना ठाठ बना रखा है। पहले तो यह प्रसादी शराब और माँस खिलाकर यहाँ के निवासियों की आत्माओं को पतित और निर्बल कर देता है, फिर मैं इसकी आज्ञा से उन आत्माओं को आसानी से दबोच देता हूँ। गाँव वाले इसी के पास आते हैं और मैं फिर इसके कहने से उस आत्मा को अपनी पकड़ से मुक्त कर देता हूँ। इस तरह दोनों की मिली-भगत चल रही है। भोले गाँव वाले पिस रहे हैं। मैं स्वयं अब इस जीवन से ऊब गया हूँ, किन्तु कर कुछ नहीं सकता, वचनबद्ध हूँ।

इतना बयान करते-करते भूत का कण्ठ रुक गया । वहाँ उपस्थित भीड़ के रोंगटे खड़े हो गये और वे अघोरी का कचूमर निकालने के लिए तैयार हो गये । उनके इस निश्चय को सुनकर भूत ने फिर कहा--मेरे रहते कोई अघोरी का बाल भी बाँका नहीं कर सकता । हे महाराज ! पहले मेरे उद्धार की बात सोचिए । मेरे इस योनि में गिरने का मुख्य कारण है, मेरी कथनी और करनी में अन्तर । आपकी कथनी और करनी एक सी है । आपने भी अभी यह स्वीकार किया है । मुझे भी कुछ आपकी आत्मा के बल का अन्दाजा हो गया है । आप मेरा उद्धार कर सकते हैं, इस अघोरी को पतित होने से बचा सकते हैं, इन ग्रामवासियों की रक्षा कर सकते हैं और उस पाखण्ड का खण्डन कर सकते हैं । आपको केवल इतना करना है कि अपने दाँये अँगूठे की रज मेरे निमित्त संकल्प कर दीजिये ।

गाँव वालों को भूत की इस बात पर बड़ा आश्चर्य हुआ कि भूत अँगूठे की रज के लिए लालायित है और उनमें से एक ने पूछ ही लिया--क्यों भाई भूत ? महाराज तो यहाँ रज में खड़े ही हैं, तुम चाहों जितनी रज लेकर अपना उद्धार क्यों नहीं कर लेते ? भूत ने उत्तर दिया--भाइयों ! पापी और अभिमानी--इन दो को महात्माओं के चरणों की रज कहाँ ? इनमें भी पापी को, यदि महात्मा की कृपा हो जाय तो, चरण-रज की प्राप्ति हो सकती है, किन्तु अभिमानी को तो कभी नहीं । मैं पापी हूँ, अस्पृश्य हूँ । मैं किसी भी उस वस्तु का स्पर्श तक नहीं कर सकता, जिसे सन्त-महात्माओं ने छू दिया हो, फिर चाहे वह रज ही क्यों न हो । यह हम भूतों की मर्यादा है । हाँ, यदि महात्माओं की अनुमति मिल जाये तो हम ग्रहण कर सकते हैं ।

श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज का हृदय लोक-कल्याण के लिए आकुल हो गया, यद्यपि इन सब कामों में फँसना भजन में बाधक है, फिर भी उन्होंने भूत को चरण-रज लेने की अनुमति दे दी ।

उधर भूत को शिकार लाने में देर करते देख कर अघोरी बाबा व्याकुल होने लगे । आज न शराब थी, न माँस । उन्होंने भूत को बहुतेरा बुलाया किन्तु वह तो यहाँ फँसा था, जाता कैसे ? अन्त में वे ही अपनी गद्दी छोड़कर यहाँ आ गये, जहाँ उनके शिष्य भूत का रज से परिमार्जन हो रहा था । महाराजश्री के दिव्य प्रभाव को देखकर उनके अन्तःकरण का कलुष नष्ट हो गया । उसने महाराजश्री के सामने

आकर पूछा--महाराज सबसे बड़ा धर्म क्या है ?

महाराजश्री ने उत्तर दिया--जो धर्म विना भेदभाव के सभी जीवों के कल्याण का मार्ग दिखाता हो, वही सबसे बड़ा धर्म है ।

और अधर्म किसे कहते हैं ? अघोरी बाबा का दूसरा प्रश्न था । आचार्यश्री ने कहा--किसी जीव के सताने की बात सोचना ही अधर्म है । यदि तुम दूसरों को सताओगे तो समझ लो, तुम अपने को सताने वाले उत्पन्न कर रहे हो ।

अघोरी के ऊपर आचार्यश्री का ऐसा असर हुआ कि वह उनके चरणों में लौटने लगा और उसने अपनी जीवन--पद्धति को त्याग कर वैष्णवी मार्ग अपना लिया । आस्थावान् भूत आचार्यश्री के चरणों की रज पाकर कृतार्थ हो गया और गाँव वाले के सामने आज जीने की एक नई पद्धति का उद्‌घाटन हो गया । चारों ओर श्रीसर्वेश्वर भगवान् और आचार्यश्री की जय--जयकारों से आकाश गूँज रहा था ।



(३८) आचार्यवर्य श्रीनारायणदेवाचार्य

येनाचार्यचरित्रं सुरगविरचितं मनोहरं सरसम् ।
तं नारायणदेवाचार्यं पूज्यं जगद्गुरुं वन्दे ॥

परिचय--

श्रीनारायणशरणदेवाचार्यजी महाराज ने श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के परम प्रतापी शिष्य श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज से मन्त्र--दीक्षा लेकर श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ को वि० सं० १७०० से लेकर वि० १७५५ तक समलंकृत किया था । वे अहर्निश श्रीगुरुदेव की आज्ञानुसार ही अपने सारे नित्य-कर्म सम्पन्न करते थे । श्रीगुरुदेव ने एक बार आज्ञा प्रदान की कि इस स्थान पर प्रसाद ग्रहण करना तभी उचित है जब श्रीसर्वेश्वर प्रभु आरोग लें । श्रीगुरुदेव के इन वचनों से श्रीनारायण-देवाचार्यजी को बहुत प्रभावित किया । पर उन्हें कठिन परीक्षा भी देनी पड़ी । एक बार श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज श्रीनारायणदेवाचार्यजी को स्थान पर छोड़ कर किसी प्रयोजनवश पुष्करराज पधारे । उन्हें यह स्मरण नहीं रहा कि श्रीनारायणदेव श्रीसर्वेश्वर प्रभु के आरोगे बिना प्रसाद ग्रहण नहीं करेंगे । श्रीनारायणदेवजी गुरुदेव की प्रतीक्षा करते रहे परन्तु वे रात्रि पर्यन्त न लौटे । सन्तों ने निवेदन किया कि आप कुछ प्रसाद ग्रहण करलें, किन्तु ये मौन रहे । रात्रि व्यतीत हो गई । द्वितीय दिवस भी गुरुजी महाराज नहीं पधारे । फिर भी आपके चित्त में कोई विकृति उत्पन्न न हुई । इस प्रकार श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज को ग्यारह दिन लग गये । पर गुरु-भक्त का श्रीसर्वेश्वर प्रभु के प्रसाद के बिना भोजन कैसा ? ग्यारहवें दिन श्रीगुरुजी महाराज पधारे और पूछे कि प्रिय नारायणदेव कहाँ है ? पता लगा कि मन्दिर से प्रतिदिन प्रातः सन्ध्या-वन्दनादि करके वे वन की ओर चले जाते हैं और वहीं प्रभु के गुणानुवाद किया करते हैं । इस बीच की गई आपकी रचनाएँ, जो बहुत ही महत्वपूर्ण थी, लिपिबद्ध न होने के कारण वन-प्रान्त में ही तिरोहित हो गई । श्रीहरि-वंशदेवाचार्यजी ने जब अपने शिष्य की भाव दशा देखी तो उनके नेत्रों से अश्रुविन्दु टपक पड़े और बोले कि नारायण क्या कारण है, जो इतने दुर्बल हो रहे हो । शिष्य का उत्तर था--गुरुदेव, सत्व-शुद्धि कर रहा हूँ । कोई विकृति आहार प्राप्त हो गया था, जो आपकी दया से अब दूर हो गया । इतना कहकर वे श्रीगुरुदेव के चरणों में गिर पड़े । श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी गद्गद् होकर नारायणदेव को गले लगा लिये ।

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



आचार्यचरित–ग्रन्थकार

आचार्यवर्य श्रीनारायणदेवाचार्य

उपस्थित भक्तवृन्द चकित-विस्मित गुरु-शिष्य का प्रेम मिलन देखते रहे ।

एक बार श्रीनारायणदेवाचार्यजी महाराज पुष्कर में स्नान की भावना से निम्बार्कतीर्थ से पधारे ।मार्ग में बीहड़ वन में कहराते सिंह की दहाड़ सुनाई पड़ी । साथ में सन्त भयभीत हो गये । बोले कि प्रतीत होता है, यहीं कहीं सिंह है । अतः कहीं सुरक्षित स्थान में चलकर प्राण रक्षा करनी चाहिए । परन्तु श्रीनारायणदेवाचार्यजी गुरुमुख से श्रवण कर चुके थे कि किसी प्राणी से भय नहीं करना चाहिए । इसलिए उन्होंने साथियों की बात नहीं मानी और उसी ओर चल पड़े जिधर से सिंह के कहराने की आवाज आ रही थी । शीघ्र ही वे सिंह के समीप पहुँच गये । इन्हें देख सिंह और जोर से दहाड़ने लगा । साथी सन्तों ने सोचा कि अब वे जीवित नहीं बचेंगे । डर कर वे भाग गये और निम्बार्कतीर्थ में पहुँच कर बोले कि श्रीनारायणदेवाचार्यजी सिंह के मुख में चले गये । हम लोगों के बार-बार मना करने पर भी नहीं माने । यह सम्वाद सुनकर सब स्तब्ध रह गये ।

इधर श्रीनारायणदेवाचार्यजी महाराज ने देखा कि वनराज तीर लगने के कारण अत्यन्त व्याकुल है । तीर उसके पैर में लगा था, अतः वह चलने में असमर्थ था । आचार्यश्री ने समीप जाकर अपना जल-पात्र एक चट्टान पर रक्खे और **श्रीसर्वेश्वर-सर्वेश्वर** कहते हुए शनैः-शनैः उसके पैर में घुसे तीर को निकालने लगे । तीर बाहर आ गया । मुमुर्षु मृगराज की वेदना कम हुई । आचार्यश्री ने उसे पुचकारा । पात्र के जल को उसके ऊपर छिड़का और आगे चल दिये । मूक मृगराज उनकी ओर देखता हुआ मानो कृतज्ञता व्यक्त कर रहा था ।

पीछे से शिकारी आ गये और आचार्यश्री को देखकर बोले--आप कहाँ कैसे आ गये ? यहाँ तो एक भयानक सिंह आया हुआ है । श्रीनारायणदेवाचार्यजी ने कहा कि--वह दुःखी सिंह मेरा क्या अहित करता ? होगा यहीं कहीं । शिकारियों ने कहा--चोट खाकर सिंह और भी क्रूर हो जाता है । आचार्यश्री ने हँसकर कहा--वह अब साधु हो गया है । तीर निकाल कर मैंने वहीं वृक्ष में लगा दिया है । बधिकों को विश्वास नहीं हो रहा था, वे तत्काल वहाँ पहुँचे और सारा दृष्य देखकर स्तब्ध रह गये । वे विस्मय में पड़ गये और कहने लगे कि--यह सर्वथा असम्भव है कि कोई मानव घायल सिंह के पास जावे और अपने प्राण बचाकर लौटे । उन्हें विश्वास हो गया कि वस्तुतः ये कोई चमत्कारी पुरुष हैं । वे आचार्यश्री के चरणों में गिर पड़े और क्षमा माँगने लगे । इस घटना की चर्चा आस-पास के गाँवों में होने लगी और इससे प्रभावित होकर हजारों की संख्या में लोग आचार्यश्री के दर्शनार्थ आने लगे ।

एक बार माथुर चतुर्वेदी एवं अन्य गणमान्य ब्राह्मण सलेमाबाद जाने के विचार से निकले । मार्ग में पता लगा कि आचार्यश्री पुष्करराज पधारे हैं । अतः वे अपने अश्वों पर बैठकर पुष्करराज की ओर चल पड़े । रात में उन्हें दस्युओं ने पकड़ लिया और उनकी सभी वस्तुएँ अपने अधिकार में कर ली । ब्राह्मण दुःखी होकर बोले, भैया ! भले श्रीनारायणदेवाचार्यजू से मिलबे आये, जो गाँठ के कपड़ा, लोटा-लगोटा हू छिन गये और सब तरियाँ मर गये । दस्युओं ने जब श्रीआचार्यचरण का नाम सुना तो उन्हें बहुत पश्चात्ताप हुआ और उनको मार्ग दिखाते हुए सादर बीहड़ जंगल से पार कर आये । माथुर ब्राह्मण कहने लगे--धन्य हैं आचार्यश्री, जिनकी कृपा ते आज हम लोगन की जान बच गई ।

वे पुष्करराज आचार्यश्री के पास पहुँचे । आचार्यश्री ने उनका मृदु वचनों से स्वागत किया । श्री श्रीभट्टजी की तपोभूमि मथुरा के निवासियों से मिलकर आचार्यश्री गद्गद् हो गये । ब्राह्मण बोले महाराजश्री ! हमारे तीर्थ पै यवनन की बड़ी ई कुदृष्टि ए और या समै मैं जजिया कर हू लग्यौ भयो है । सो आप कछु ऐसो मार्ग बताय देउ जासों देश वासिन कोऊ भलो होय । आचार्यश्री ने आदेश दिया कि--आजकल शासन के मुखिया अजमेर में आये हुए हैं । यह उनकी धर्म यात्रा है । आप लोग वहाँ चले जाओ । श्रीसर्वेश्वर प्रभु आप लोगों के संकल्प को अवश्य ही पूर्ण करेंगे ।

आचार्यश्री का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर समस्त ब्राह्मण अजमेर गये और परिचय देते हुए जजिया कर से मुक्त कर देने की प्रार्थना की । श्रीसर्वेश्वर प्रभु की प्रेरणा से उसने प्रार्थना स्वीकार कर ली और माथुर ब्राह्मणों को जजिया कर से मुक्त कर दिया । पता नहीं ऐतिहासिकों ने इन माथुर ब्राह्मणों के प्रयास एवं आचार्यश्री के सहयोग की चर्चा इतिहास के पन्नों में की है या नहीं । पर जो प्रमाण जजिया हटाने के संदर्भ में हमें मिला है वह पं० श्रीकिशोरीनन्दनजी ओझा, छोटी बस्ती पुष्कर, अजमेर की बही में मथुरा के ब्राह्मणों के लेख में प्राप्त है । यह उल्लेख सन् १६८० का है ।*

---

* सं० १७३७ आ० सु० सप्तमी मथुराजी के समस्त पंच तेरा थोक, चौसठ अल्ल ----- पंचन ने देख कें लिख दीनी जमुना पुत्र होय सो प्रोहित कल्यान ओझा की संतति को माने, सुशुभम्-अजमेर जजिया छुड़ायबे कूँ आये तब लिख दीनो ।

इसमें लगभग बीस व्यक्तियों के नाम हैं । जिनमें से कुछ के नाम बिल्कुल स्पष्ट हैं-ककोर, (अल्ल), विरधीचन्द, हीरामनी, उमेदी, लोदू चौबे, गोवरधन, भगवन्त, बिहारी, लोकमनी, पद्मनाभ, परशुराम, इन्द्रमणी, जगजीवन हरिवंस के, चौधरी वंसीकिशोर गिरधर के ।

श्रीनारायणदेवाचार्यजी महाराज सं० १७५० के आस-पास महाराजा जगतसिंहजी के अत्यधिक आग्रह पर उदयपुर पधारे । वहाँ कई वर्षों तक निवास किये और भक्ति का प्रचुर प्रचार-प्रसार करते रहे । श्रीप्रयागदासजी का स्थल और बाईजीराज का कुण्ड आदि अनेक मठ-मन्दिरों का निर्माण कराकर भक्ति के स्थायी केन्द्र स्थापित कर दिये । आपकी रचना **श्रीआचार्य चरितम्** एक अनुपम कृति है । जिसमें समस्त आचार्यों के चरित्र संक्षिप्त रूप में वर्णित हैं । आपने अपने गुरुदेव श्रीहरिवंशदेवाचार्यजी महाराज का स्मृति महोत्सव बड़ी धूमधाम के साथ गिरिराज में श्रीगोविन्दकुण्ड पर मनाया था । जिसमें लाखों की संख्या में सन्त--महात्मा सम्मिलित हुए थे । ऐसा महोत्सव व्रज में आज तक नहीं हुआ ।

आपने उदयपुर में ही अपने मङ्गलमय देह का त्याग किया । आपका समाधि स्थल चरणपादुकायें उदयपुर में ही विद्यमान है जो कि कुण्ड--स्थान के संरक्षण में है । आपका पाटोत्सव पौष शुक्ल ६ (नवमी) को मनाया जाता है ।



(३९) आचार्यवर्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्य

गीतामृतमयी गङ्गा, येन लोके प्रवाहिता ।
तं श्रीवृन्दावनं देवाचार्यं वन्दे जगद्गुरुम् ॥

परिचय--

वि० सं० १७५४ में आचार्यप्रवर श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज अपने गुरुवर्य आचार्यवर्य श्रीनारायणदेवाचार्यजी के गोलोकवास के पश्चात् आचार्यपीठ सिंहासनासीन हुये और श्रुति-स्मृति-पुराण प्रतिपादित भक्ति पूर्ण अपने सदुपदेशों के द्वारा अनुपम लोक हित किया । आपकी सहिष्णुता, सरलता, विद्वत्ता, तपश्चर्या और त्याग आदि से जयपुर, जोधपुर, किशनगढ, बीकानेर, भरतपुर आदि राज्यों की तवारीखों में विक्रम सम्वत् १७५३ से १८०० तक आपके पुनीत नाम का उल्लेख मिलता है । कृष्णगढाधीश महाराजा श्रीसांवतसिंहजी (श्रीनागरीदासजी) सपरिकर आप ही के शिष्य थे । आपकी परम कृपा से उन्हें मानसिक उपासना और दृढ निष्ठा प्राप्त हुई थी ।

वि० सं० १७५६ में आमेर नरेन्द्र महाराजा सवाई श्रीजयसिंहजी (द्वितीय) के विनय पत्र पर आप आमेर पधारे । नरेन्द्र ने बहुमान सम्मान पूर्वक अगवानी सत्कार करके अपने श्रीगुरुदेव को राज महलों में पधराया । इन श्रीगुरुदेव की आज्ञानुसार महाराजा श्रीजयसिंह ने वि० सं० १७६९ और १७७५ के बीच में दो महान् यज्ञ किये । वह यज्ञ स्थल आमेर से बाहर श्रीपरशुरामद्वारा के निकट है जो आज भी विद्यमान है । उन यज्ञों में अग्रपूज्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज ही रहे। उन्हीं के आदेशानुसार वि० सं० १७८४ माघ कृष्ण ५ (पञ्चमी) बुधवार पूर्वाह्न के समय में भारत के एक दर्शनीय महानगर जयपुर शहर बसाने की नींव लगी। उस शहर में निवास करने के लिए वैष्णव सम्प्रदायों के आचार्य एवं महत्तम महानुभाव भी आमन्त्रित किये गये । उनके लिए मठ--मन्दिरादिकों का भी निर्माण हुआ ।

आप संस्कृत, हिन्दी, व्रज भाषा, बङ्ग भाषा एवं मिथिला आदि अनेक भाषाओं के पूर्ण विद्वान् थे । आपके द्वारा निर्मित **श्रीगीतामृत गङ्गा** व्रजभाषा में बड़ा ही अनुपम ग्रन्थ है । यह ग्रन्थ श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ द्वारा संचालित श्रीनिम्बार्क मुद्रणालय से प्रकाशित हो चुका है एवं उपलब्ध है ।

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



गीतामृतगंङ्गा–वाणीकार

आचार्यवर्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्य

आपके समय के विद्वान् कवियों ने आपके कलिमलापह कलेवर में अलौकिक ऐश्वर्य का अनुभव किया । आचार्य श्रीवृन्दावनदेवजी में श्रीवृन्दावनविहारी का साक्षात्कार होने पर उनका बाग्देवी ने भी यही प्रकाशित किया--

श्रीवृन्दावनदेवाय गुरुवे परमात्मने ।
मनो मंजरी रूपाय युग्म संगानुचारिणे ॥
भजेऽहं बनाधीशदेवं महान्तं महासौम्यरूपं सुशान्तम् ।
सदा-प्रेममत्तं महाप्रेमगम्यं मुखे राधिका-कृष्ण-लीलासुरम्यम् ॥
(पं० शेष श्रीजयरामदेव)

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के अति सन्निकट होने के कारण रूपनगर--किशनगढ के राजा महाराजाओं का आचार्यपीठ एवं श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी के चरणों में और भी विशेष अनुराग बढा । आचार्यचरणों के सम्पर्क से इस राजकुल के तत्कालीन राजा, राज महिला एवं राज परिकर और प्रजाजनों में भगवद्भक्ति का अनुपम विकास हुआ । महाराजा श्रीराजसिंहजी, राजमहिषी श्रीबाँकावतीजी, कुँवर श्रीसाँवतसिंहजी (श्रीनागरीदासजी), राजकुमारी श्रीसुन्दरकुँवरिजी और इनके दास और दासियाँ भी विशिष्ट भक्त कवि बने । इन सभी भक्त कवियों द्वारा अनेक भक्तिपूर्ण ग्रन्थों का निर्माण हुआ । जिससे भक्ति का पूर्ण रूप से प्रचार-प्रसार हुआ ।

आपके समय की एक चमत्कारपूर्ण घटना

किशनगढ नरेश महाराजा श्रीसाँवतसिंहजी (श्रीनागरीदासजी) की बहिन श्रीसुन्दरकुँवरिजी ने आचार्यश्री की चमत्कारपूर्ण एक घटना का अपने **मित्र शिक्षा** नामक ग्रन्थ में इस प्रकार वर्णन किया है--

एक समय आप अनेक वैष्णवों को साथ लेकर तीर्थ यात्रा करने पधारे थे । अनेक तीर्थ स्थलों में भ्रमण करते हुये पंजाब प्रान्त में पहुंचे । एक दिन मार्ग में चलते-चलते सन्ध्या हो गई । एक ग्राम के समीप एक सुन्दर उद्यान था, उसके चारों ओर एक परकोटा तथा उसके चारों कोनों पर बुर्ज बनी हुई थी । वहाँ की जल जङ्गल की सुविधा देख रात्रि में निवास का विचार किया । श्रीसर्वेश्वर भगवान् की सेवा हुई, भोजन प्रसादी पाकर रात्रि में शयन किया । जब अर्द्धरात्रि का समय हुआ

तो एक बुर्ज में से किसी दु:ख भरे शब्दों में कराहने की आवाज आई । साथ वाले वैष्णवों ने उठकर इधर-उधर वहाँ जाकर के भी देखा, पर कोई व्यक्ति नजर नहीं आया । बहुत खोज करने पर उन्होंने उस बुर्ज में जहाँ से आवाज आ रही थी वहाँ एक कील ठुकी हुई देखी । उन्होंने उस कील को उखाड़ दी । तत्काल ही वह शब्द होना बन्द हो गया । वैष्णव पुन: अपने-अपने स्थान पर आकर सो गये । थोड़ी देर पश्चात् ही कभी भैंसा, कभी सफेद वस्त्रधारी पुरुष के रूप में प्रकट और कभी अन्तर्हित हो जाता है, ऐसी भयङ्कर घटना को देख भयभीत होकर उन वैष्णवों ने महाराजश्री से निवेदन किया, तब महाराजश्री ने सम्यक् प्रकार अवलोकन कर कहा कि डरो मत, ऐसा कहते हुये हाथ में थोड़ा सा जल लेकर अभिमन्त्रित कर उसे उधर फैंका जिधर से वह अन्तर्हित हुआ था । फिर वह दिखना बन्द हो गया । साथ वाले वैष्णव सब अपने-अपने आसनों पर जाकर सो गये । तब वह मनुष्य रूप धारण करके आचार्यश्री के निकट आया और दण्डवत् प्रणाम करके बोला कि महाराज ! मैं प्रेत हूँ और मैं यहाँ बहुत ही उत्पात किया करता था । अतएव किसी मन्त्र वेत्ता ने मुझे इस बुर्ज में बांध दिया था, इस कारण मेरे सिर में भारी वेदना होती थी इसी से मैं चिल्लाया करता था । आज आपने पधार कर मुझे उस दु:ख से निवृत्त कर दिया । अब आप अपनी ही शरण में मुझे भी रखिये । मैं आप और आपके साथ वाले वैष्णवों की सेवा किया करूँगा । उसकी विनय श्रवण कर इन्हें दया आई और उसके इस निश्चयात्मक विचार पर अति प्रसन्न हुये । तब उसे आश्वासन देते हुये श्रीचरणों ने कहा कि अच्छा तुम्हें रखेंगे । प्रात: काल महाराजश्री ने सभी वैष्णवों को यह वृत्तान्त सुनाया और कहा कि वह हमारे साथ रहेगा और आप लोगों की सेवा करेगा । आप लोग डरना नहीं । मार्ग में सामान लेकर चलते समय सामान तो दीखेगा, पर वह नहीं । इस पर सभी ने हर्ष प्रकट किया और इस कौतुहल को देखने के लिए अत्यन्त हर्षित हुये । वह प्रेत इस प्रकार सेवा करते हुये समस्त यात्रा में सङ्ग में रहा । आचार्यपीठ पर आने के पश्चात् महाराजश्री ने उसके मोक्ष के लिए कुछ अनुष्ठानादि का आयोजन किया, जिससे उसकी मुक्ति हुई और वह प्रार्थना करते हुये दिव्य-लोक को चला गया । आकाश मार्ग में उसकी तेज रूप ज्योति को स्पष्टरूप से सभी ने देखा । दु:खी जीवों पर दया करना ही महापुरुषों का परम लक्ष्य है ।

श्रीविरजानन्द तथा श्रीआनन्दघनजी भी आप ही के शिष्य थे । श्रीवृन्दावन-देवाचार्यजी महाराज की चरण पादुका श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में विद्यमान है । जहाँ मनुष्य लेरिया आदि ज्वर से पीड़ित होने पर जब दवाईयों से ज्वर नहीं जाता है तब

इनकी चरण पादुका का आश्रय लेते हैं और ज्वर मुक्त हो जाते हैं ।

प्राचीन इतिहास के अनुसार हरिद्वार आदि कुम्भ के अवसर पर किसी कारण विशेष को लेकर शैवशाक्त तथा वैष्णवों में एक बहुत बड़ा भारी संघर्ष चल पड़ा था । वह संघर्ष शनैः शनैः बहुत बढ गया और प्रचण्ड रूप धारण करता हुआ एक दूसरे के लिए प्राण-घातक बनकर सर्वत्र फैल गया ।

ऐसे समय राजस्थान में वैष्णवाचार्यों का अच्छा समुदाय था और जयपुर नगर की स्थापना हो जाने के कारण प्रायः अनेक सम्प्रदायों के प्रमुख वरिष्ठ आचार्य सन्त-महात्मा भी वहाँ विराज रहे थे । जिनके पास यह समस्या आर्तनाद के साथ पहुँची, सभी ने सभा करने का निश्चय किया । जयपुर राज्य की तवारिखों और वहाँ के पुरातत्व संग्रहालय के लेखों से पता चलता है कि सर्वप्रथम श्रीनिम्बार्काचार्य-पीठाधिपति श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज के सभापतित्व में जयपुर से उत्तर की ओर लगभग ३० कोस की दूरी पर एक प्रशस्त परिसर में वैष्णवों की महती सभा हुई। कहा जाता है कि वि० सं० १७९१ जहाँ पर इस सभा का श्रीगणेश हुआ था आगे चलकर उस स्थान का नाम **गणेश्वर** नाम प्रसिद्ध हुआ, वहाँ से २-३ कोस की दूरी पर जो द्वितीय बैठक हुई, उसका नाम निम्बार्क स्थान(नीम का थाना)प्रसिद्ध हुआ उस सभा में सबको एक साथ मिल कर (अर्थात् सुसंगठित होकर) रहने के लिये कुछ ऐसे साधनों और आचरणों का समन्वय किया गया जो कि वे किसी सम्प्रदाय में नियम से माने जाते थे, और किसी में उनकी उपेक्षा थी, कोई-कोई मनमुखी आचरण चल पड़े थे । वे ५२ प्रतिज्ञायें थी, जिनको कि चारों सम्प्रदायों वालों ने स्वीकार किया था । उनमें दोहरा कण्ठी बांधना, गोपीचन्दन का तिलक करना, एकादशी में ४५ घटी का कपाल वेध मानना, दण्डवत् प्रणाम विधि आदि १३ बाते श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय की थी । अवशिष्ट ३९ बातें श्रीविष्णुस्वामी, श्रीरामानन्दीय, श्रीमाध्व-गोडेश्वर, श्रीराधावल्लभीय आदि सम्प्रदायों की ओर से उपस्थित की गई थी । सभा में वैष्णवों की ३ अनी और उनके ५२ द्वारा निर्धारित किये गये । इन अनियों का नेतृत्व परम वैष्णव वीर प्रतापी और उत्साह सम्पन्न स्वामी श्रीबालानन्दाचार्यजी को दिया गया था । फिर उन ३ अनियों के ७ अखाड़े बन गये । आगे चलकर उनके कितने ही अवान्तर प्रभेद होकर वैष्णव समाज सुसंगठित बन गया । एवंविध आपके अनेक पावनतम चरित के मङ्गलमय प्रसङ्ग हैं, यहाँ विस्तार भय से स्वल्प रूप में ही कतिपय प्रसङ्ग निर्दिष्ट किये गये हैं । आपश्री का समाधि स्थल एवं चरण पादुकायें आचार्यपीठ में ही विद्यमान है जिसकी चर्चा चरित प्रसङ्ग में की जा चुकी है । आपका पाटोत्सव भाद्रपद कृष्ण १३ (त्रयोदशी) का है । ❋

(४०) आचार्यवर्य श्रीगोविन्ददेवाचार्य

सर्वेश्वरार्चने लीनं भक्तिमार्गोपदेशकम् ।
श्रीगोविन्ददेवाचार्यं प्रणतोस्मि जगद्गुरुम् ॥

परिचय--

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीगोविन्ददेवाचार्यजी महाराज का स्थिति काल विक्रम की १८ वीं शताब्दी माना जाता है ।

वि० सं० १७९७ से १८१४ तक आपने आचार्य सिंहासन को अलंकृत किया। आपके समय में आचार्यपीठ की यथेष्ठ उन्नति हुई ।

जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज के धामवास हो जाने पर जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, करोली आदि के नरेशों ने एक मत होकर श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर महाराष्ट्र देशीय शेषजयरामजी को अभिषिक्त करना चाहा । यह संघर्ष बहुत जोर-शोर से चला, किन्तु भक्त समुदाय और सम्प्रदाय के विरक्त सन्त, महान्तों ने राजाओं का विरोध किया । अन्त में राजाओं को अपना विचार बदलना पड़ा और विक्रम सं० १८०० में श्रीगोविन्ददेवाचार्यजी महाराज को आचार्यपीठ के सिंहासन पर अभिषिक्त किया । आप संस्कृत और हिन्दी के अच्छे विद्वान् और विशिष्ट कवि थे । पद रचना बड़ी ही सुललित है । एक पद के अन्त में देखिये जिसमें कि भगवान् श्रीसर्वेश्वर का नामोल्लेख भी है ।

जयति वृषभानु-नन्दिनी जगवन्दिनी, कृष्णहियचन्दिनी रंग--सेवी ।
प्रणत गोविन्द नंद नंद सुख कन्द, सर्वेश निजदास हरिप्रिया देवी ॥

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठासीन होने के पश्चात् आप अनेक सन्तों की जमात एवं विद्वानों को लेकर विशेषतः भ्रमण किया करते थे । अधर्म का दमन एवं धर्म की स्थापना करते हुये जीवों को वैष्णव धर्म में दीक्षित कर हरि सम्मुख करना ही एक मात्र आपके भ्रमण का मुख्य उद्देश्य था । इन आचार्यचरणों को बड़े-बड़े राजा एवं बादशाह निमन्त्रण देकर अपने यहाँ बुलाने में अपना सौभाग्य समझते थे । एक समय धर्म प्रचारार्थ आप दिल्ली पधारे । आप में कई एक ईश्वरीय गुण-विद्यमान थे। **आचार्यं मां विजानीयात्** यह उद्धव के प्रति स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है । आपकी गुण गरिमा श्रवण कर नगरवासियों की भीड़ उपदेशामृत श्रवण एवं दर्शन के लिये आने लगी । इनके उपदेशामृत की प्रशंसा सर्वत्र होने लगी । रसिक महानुभावों में एक अपूर्व भावों की विशेषता होती है । जिनकी भावपूर्ण भजन शैली एवं पराभक्ति के द्वारा जागतिक जीवों के लिए लौकिक एवं शारीरिक सम्बन्धी सभी आसक्तियों

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



वाणीग्रन्थकार
आचार्यवर्य श्रीगोविन्ददेवाचार्य

(४२) आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

श्रीमद्भागवताख्यं पीयूषं पिवन् पाययन् सततम् ।
श्रीसर्वेश्वरशरणो देवाचार्यः सदा जयति ॥

परिचय--

आप अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ की आचार्य परम्परा में श्रीहंस भगवान् से ४२ वीं संख्या में विद्यमान थे । आपका जन्म जयपुर मण्डलान्तर्गत सराय नामक ग्राम के सुप्रसिद्ध गौड़ ब्राह्मण पं० श्रीभवानीरामजी जोशी के घर हुआ था । आपके माता-पिता भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु के अनन्य भक्त थे । माता-पिता ने श्रीसर्वेश्वर प्रभु की कृपा प्रसाद से ही आप जैसे पुत्र-रत्न को पाया था । श्रीसर्वेश्वर प्रभु श्रीशालग्राम स्वरूप हैं, अतः उनकी आराधना से संप्राप्त होने के कारण पिता ने इस बालक का नाम भी शालग्राम ही रख दिया । इनके पीछे प्रभु कृपा से दूसरा भाई और हो जाने पर माता-पिता ने इनको भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा में ही समर्पण कर दिया । आचार्यश्री (जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीगोविन्दशरणदेवा-चार्यजी महाराज) के चरणाश्रित होकर दीक्षा के समय श्रीसर्वेश्वरशरण यह नाम निर्धारित किये जाने के पश्चात् आपका अध्ययन प्रारम्भ हुआ । होनकार विरवान् के होत चिकने पात वाली कहावत आपके लिये पूर्ण रूपेण चरितार्थ हो जाती है । थोड़े समय के बाद ही आप हिन्दी, संस्कृत भाषाओं के ज्ञाता होकर पूर्ण (प्रकाण्ड) विद्वान् हो गये । वि० सं० १८४१ में आप श्रीनिम्बार्कपीठासीन हुये ।

वैसे तो जयपुर बसने के पूर्व आमेर नरेश सवाई जयसिंहजी (द्वितीय) ने राज्य गद्दी पर आसीन होते ही अपने गुरुदेव अनन्त श्रीविभूषित श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज को आचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) से आमेर पधराया । आपश्री की सम्मति से और अन्य भी अनेक विद्वानों व महात्माओं को आमन्त्रित किया तथा आपश्री की आज्ञानुसार महाराज श्रीजयसिंहजी ने सं० १७८४ विक्रम में जयपुर की स्थापना की । इस प्रकार आचार्यचरणों का आमेर व जयपुर नरेशों से सम्पर्क निरन्तर बना रहा । इसी परम्परा में श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज से चतुर्थ पीठिका में श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज एवं सवाई जयसिंहजी (द्वितीय) की चतुर्थ पीठिका में महाराज श्रीप्रतापसिंहजी वर्तमान थे ।

का सहज ही छुटकारा हो सकता है। आपकी प्रशंसा श्रवण कर नूरजहाँ ने भी दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। बादशाह जहांगीर इन्हें सादर लेने के लिए पधारे बादशाह के आग्रह से आप महल में पधारे और अपने भक्तिरूप उपदेशामृत द्वारा सभी परिवार को कृतार्थ किया।

एक बार किशनगढ के नरेश श्रीसांवतसिंहजी (श्रीनागरीदासजी) और उनके छोटे भ्राता बहादुरसिंहजी में परस्पर अनबन रहती थी। कई राजा-महाराजाओं ने भी उन्हें अनेक बार समझाया, किन्तु कलह शान्त नहीं हुआ। विक्रम सं० १८१४ के आश्विन शुक्ल ६ शुक्रवार को रूपनगर से श्रीसाँवतसिंहजी और किशनगढ से श्रीबहादुरसिंहजी आपके कुशल समाचार पूछने आये। उस समय आप अस्वस्थ थे। दोनों भाई आचार्यचरणों के निकट बैठे थे। दोनों ही ने कुशल समाचार पूछे। इस पर महाराजश्री ने कहा-जब तक रूपनगर और कृष्णगढ राज्य का कलह शान्त न होगा हमारा स्वास्थ्य नहीं सुधर सकेगा। दोनों ही ने कहा क्या आज्ञा है। महाराज बोले रूपनगर की राज्य गद्दी पर सरदारसिंहजी को और कृष्णगढ की गद्दी पर बहादुरसिंहजी को अभिषिक्त करके आप (साँवतसिंहजी) श्रीवृन्दावन वास करिये। दोनों ने आज्ञा मान कर वैसी ही व्यवस्था की। सच है, महापुरुषों के वचनों में एक प्रबल शक्ति होती है। जिसके द्वारा बड़े से बड़े कार्य भी सहज ही में सुसम्पन्न हो जाते हैं। वे समदर्शी होते हैं। उनमें सदा एकता की भावना बनी रहती है। वे द्वेष करने वालों में भी परस्पर प्रेम भावना उत्पन्न करा देते हैं। एक कवि ने कहा है कि-

कैंची आरा दुष्टजन जुरे देत विलगाय।
सुइ सुहागा सन्त-जन बिछुरे देत मिलाय॥

इनके द्वारा रचित **श्रीयुगल रस माधुरी** परमोत्कृष्ट ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ प्रकाशित भी हो चुका है। आचार्यों के मङ्गल बधाई एवं अन्य फुटकर पद भी बहुत हैं। श्रीवृन्दावन की समाज में जहाँ-तहाँ गाये जाते हैं। आपकी रचनाओं का एक बड़ा भारी संकलन **हरि गुरू सुयश भास्कर** के नाम से प्रख्यात है। सम्पूर्ण वाणी अनुपलब्ध है। इसकी हस्तलिखित एक प्रति भरतपुर राज्य में किसी काश्तकार के घर पर जैन मुनि श्रीकान्तिसागरजी को प्राप्त हुई थी जो अभी तक अप्रकाशित है। आपकी समाधि स्थल एवं चरण पादुकायें आचार्यपीठ में सुशोभित है। और पाटोत्सव दिवस कार्तिक कृष्ण ५ (पञ्चमी) है।



(४१) आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्य

ब्रजान्माधवमानीय रूपदुर्गाच्चराधिकाम् ।
श्रीराधामाधवौ देवौ यः पीठे प्रत्यतिष्ठिपत् ॥
जयपुरेशं विस्माप्य श्रीजीत्याख्यामवाप्तवान् ।
गोविन्दशरणोदेवाचार्यः स जयतादिह ॥

परिचय--

आचार्य श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी महाराज बड़े ही प्रतिभा सम्पन्न आचार्य थे । विक्रम सं० १८१४ से १८४१ तक आप श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर विराजमान थे। आपने ही बंगाल के सुप्रसिद्ध कवि श्रीजयदेव के आराध्य भगवान् श्रीराधामाधवजी जो कि बहुत वर्षों से व्रज-मण्डलस्थ श्रीराधाकुण्ड (श्रीनिवासाचार्यजी की बैठक) पर विराजमान थे । वि० सं० १८२३ में लाकर वर्तमान श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में प्रतिष्ठापित किया था । इस प्रसङ्ग का विस्तृत विवेचन हम श्रीराधामाधवजी के परिचय में कर आये हैं ।

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश आचार्यचरणों की श्री श्रीजी संज्ञा भी आपके समय से ही प्रचलित हुई थी । पूर्ववर्ती आचार्यों के नाम राजा-महाराजाओं के यहाँ से प्राप्त पत्रों एवं पट्टों में श्रीस्वामीजी तथा श्रीमहाप्रभुजी आदि विशेषणों से ही प्रयुक्त होता आ रहा था । इस प्रसङ्ग में एक जन-श्रुति इस प्रकार है--

जब कभी राजा-महाराजाओं की महाराणियाँ भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु के दर्शनार्थ पीठ में आती थी, तब केवल एक पुजारी के अतिरिक्त और कोई भी पुरुष वहाँ नहीं रहता था । और जब वे आचार्यश्री के दर्शन करने उपस्थित होती तब भी केवल आचार्यश्री ही विराजे रहते थे अन्य कोई नहीं । इसी प्रकार जब कभी आचार्यश्री आमन्त्रित होकर राज्य के रनवासों में पधारते थे तब भी ऐसी ही प्रथा थी । परिचारक-गण सब ड्योडी पर ही ठहर जाते थे । रानियाँ एवं उनकी परिचारिकायें आचार्यश्री का अर्चन-पूजन करती थी । आचार्यश्री वहाँ पर ही उनको दीक्षा (मन्त्रोपदेश) देते थे । इसमें कुछ समय भी लगता था । एक बार जयपुर के राज--महल में श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी महाराज आमन्त्रित होकर विराजमान थे उस समय किसी

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



गोविन्दवाणीग्रन्थकार

आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्य

विरोधी ने जयपुर नरेश को बहकाया। तब नरेश बिना ही किसी सूचना के तत्काल महल में जा पहुँचे । आचार्यश्री सिंहासन पर विराजमान थे । रानियाँ और परिचारिकायें उपदेश श्रवण कर रही थीं। यह देखकर भी जब नरेश को सन्तोष नहीं हुआ तब आचार्यश्री ने उनकी मनो-भावना जान श्रीकिशोरीजी का ध्यान किया। उसी समय नरेश क्या देखते हैं कि उसी सिंहासन पर आचार्यश्री के स्थान में श्रीकिशोरीजी विराजमान हैं । दर्शन कर राजा कृतार्थ हो गया । अब तो नरेश अपनी करनी पर पश्चात्ताप करने लगे। क्षमा याचना के पश्चात् उसी समय जयपुर नरेश ने आपको श्री श्रीजी की उपाधि से समलंकृत किया । तत्पश्चात् यह श्रीजी शब्द जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधिपति आचार्यों के साथ उपनाम के रूप में व्यवहृत होने लगा है। उसी काल से लेकर जयपुर राज्य की समस्त प्रजा में परस्पर मिलने पर नमस्कार रूप में **जय श्रीजी की** कही जाने लगी । आज भी बड़े-बूढे लोगों में यह प्रथा प्रचलित है। यद्यपि श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्यों में परम्परा से ही अन्तरंग रूप से सखी भाव की उपासना चली आ रही है, कहीं गुप्त रूप से और कहीं प्रकट रूप से । श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी महाराज ने नरेश को प्रत्यक्ष रूपेण इस विषय का अनुभव स्वयं दर्शन देकर करा दिया। इस प्रकार आचार्यों के नाम में जो शरण पद लगा हुआ है, वह भी आपके समय से प्रचलित हुआ है। इनके पूर्ववर्ती आचार्यों के नामों के अन्त में देवाचार्य पद का ही प्रयोग होता था ।

आपके समय की ही श्रीसर्वेश्वर प्रभु से सम्बन्धित एक चमत्कारपूर्ण घटना इस प्रकार हैं--

एक समय किसी भावुक भक्त ने भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु के विशिष्ट भोग समर्पण कराया, भगवान् की राजभोग आरती के अनन्तर जब सन्तों और भक्तों की विशाल पङ्गत बैठी और सभी भगवत्-प्रसाद लेने लगे तो रसोई के भवन की छत टूटने की एक विचित्र आवाज आई और सबके देखते-देखते भवन के छत की कई पट्टियाँ भी टूटने लगी । पङ्गत में बैठे हुये सभी सन्त और भक्तजन व्याकुल हो उठे । उस समय आचार्यश्री ने सान्त्वना देते हुये कहा कि डरो मत इसका अभी प्रबन्ध हो जायेगा । आपने उसी समय भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु का स्मरण करते हुये अपने हाथ की छड़ी को छत के स्पर्श करा कर सबसे कहा आप लोग शान्तिपूर्वक भगवान् का प्रसाद पा लो । आप सबके प्रसाद पा लेने पर ही यह भवन गिरेगा । हुआ भी वैसा ही, पङ्गत के उठने पर आचार्यश्री अपनी छड़ी को हटा कर वहाँ से बाहर आये कि उसी समय वह विशाल भवन पूरा का पूरा ही धराशायी हो गया । आचार्यचरणों

द्वारा इतने बड़े विशाल भवन को गिरने से रोके जाने का चमत्कार पूर्ण दृश्य देखकर समस्त सन्त भावुक भक्तजनों को अत्यन्त विस्मय हुआ और आपके अद्‌भुत प्रभाव से चकित हो उठे । सन्तों ने आपश्री से भवन के अकस्मात् गिरने का कारण जानना चाहा । आपश्री ने सभी का समाधान करते हुये बताया कि देखो, आज जिस भक्त द्वारा भोग समर्पित हुआ है वह अन्न पूर्ण पवित्र न होने के कारण ही यह आकस्मिक घटना घटी ।

इस प्रकार श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी महाराज के कितने ही महिमापूर्ण चरित्र मिलते हैं । आपका वृहद् वाणी ग्रन्थ भी है , जिसका कुछ भाग श्रीसर्वेश्वर मासिक पत्र वर्ष १८ के विशेषांक रुप में **श्रीगोविन्दशरणदेवाचार्यजी की वाणी** के नाम से प्रकाशित भी हो चुका हैं । इस ग्रन्थ की ललित पदावली का मनोरम शब्द गुम्फन बड़ा ही आकर्षक और अलंकार पूर्ण है, युगलकिशोर श्यामाश्याम की रसमयी लीलाओं का चित्रण बड़ा ही भावयुक्त और परम सरस है, जिसके अवलोकन मात्र से ही हृदय प्रफुल्लित हो उठता है । आपकी प्रखर विद्वत्ता और सिद्धि सम्पन्नता सर्व विदित है । आपने अपने तपोबल से अनेक विधर्मियों को परास्त कर वैष्णवधर्म की विजय पताका फहराई । राजस्थान के अनेक राजा-महाराजा और प्रजा आपके अनुगत होकर वैष्णव धर्म में परम आस्था रखती थी । इस प्रकार श्रीआचार्यवर्य्य की इस महत्वपूर्ण अलौकिक घटना से सभी को दिव्य और सात्विक प्रेरणा प्राप्त होती रहेगी । भगवान् श्रीसर्वेश्वर के गुण-गान युक्त एक पद आपकी वाणी से उदधृत किया जा रहा है--

करहु नाथ सर्वेश्वर दीन जानि करुना ।
कीजिये सनाथ मोहि आय पर्‌यो सरना ॥
मैं अनादि सिद्ध दास तुम अनादि स्वामी ।
विसरत क्यों कृपा सिन्धु जानि कुटिल कामी ॥
अपनी द्दढ़ भक्ति साधु सङ्ग मोहि दीजै ।
लीला गुन रूप नांव रसना रस पीजै ॥
ऊँच-नीच जोनिन मैं दुःख अपार पायो।
गोविन्दसरन दीनबन्धु जानि सरन आयो ॥

इस प्रकार ऐसे प्रतापी आचार्यश्री ने २७ वर्ष तक आचार्यपीठ को सुशोभित कर विक्रम सं० १८४१ के चैत्र मास में श्रीयुगलकिशोर की नित्य निकुञ्जलीला में प्रवेश किया । आपकी चरण-पादुका श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में विद्यमान है । पाटोत्सव कार्तिक कृष्ण ८ (अष्टमी) को मनाया जाता है ।

(४२) आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

श्रीमद्भागवताख्यं पीयूषं पिवन् पाययन् सततम् ।
श्रीसर्वेश्वरशरणो देवाचार्यः सदा जयति ॥

परिचय--

आप अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ की आचार्य परम्परा में श्रीहंस भगवान् से ४२ वीं संख्या में विद्यमान थे । आपका जन्म जयपुर मण्डलान्तर्गत सराय नामक ग्राम के सुप्रसिद्ध गौड़ ब्राह्मण पं० श्रीभवानीरामजी जोशी के घर हुआ था । आपके माता-पिता भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु के अनन्य भक्त थे । माता-पिता ने श्रीसर्वेश्वर प्रभु की कृपा प्रसाद से ही आप जैसे पुत्र-रत्न को पाया था । श्रीसर्वेश्वर प्रभु श्रीशालग्राम स्वरूप हैं, अतः उनकी आराधना से संप्राप्त होने के कारण पिता ने इस बालक का नाम भी शालग्राम ही रख दिया । इनके पीछे प्रभु कृपा से दूसरा भाई और हो जाने पर माता-पिता ने इनको भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा में ही समर्पण कर दिया । आचार्यश्री (जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीगोविन्दशरणदेवा-चार्यजी महाराज) के चरणाश्रित होकर दीक्षा के समय श्रीसर्वेश्वरशरण यह नाम निर्धारित किये जाने के पश्चात् आपका अध्ययन प्रारम्भ हुआ । होनकार विरवान् के होत चिकने पात वाली कहावत आपके लिये पूर्ण रूपेण चरितार्थ हो जाती है । थोड़े समय के बाद ही आप हिन्दी, संस्कृत भाषाओं के ज्ञाता होकर पूर्ण (प्रकाण्ड) विद्वान् हो गये । वि० सं० १८४१ में आप श्रीनिम्बार्कपीठासीन हुये ।

वैसे तो जयपुर बसने के पूर्व आमेर नरेश सवाई जयसिंहजी (द्वितीय) ने राज्य गद्दी पर आसीन होते ही अपने गुरुदेव अनन्त श्रीविभूषित श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज को आचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) से आमेर पधराया । आपश्री की सम्मति से और अन्य भी अनेक विद्वानों व महात्माओं को आमन्त्रित किया तथा आपश्री की आज्ञानुसार महाराज श्रीजयसिंहजी ने सं० १७८४ विक्रम में जयपुर की स्थापना की । इस प्रकार आचार्यचरणों का आमेर व जयपुर नरेशों से सम्पर्क निरन्तर बना रहा । इसी परम्परा में श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज से चतुर्थ पीठिका में श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज एवं सवाई जयसिंहजी (द्वितीय) की चतुर्थ पीठिका में महाराज श्रीप्रतापसिंहजी वर्तमान थे ।

इस समय में महाराज श्रीप्रतापसिंहजी ने श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज की अनुमति से जयपुर में वैष्णवों के चारों सम्प्रदायों की स्थायी रूप से निवास व्यवस्था की।

जयपुर राज सम्मानित विद्वद्वर कवि मण्डन भट्ट ने वि० सं० १८७८ में **जय साह सुजस प्रकाश** नामक ग्रन्थ की रचना की है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि--

माधव महीन्द्र सुत श्रीप्रताप, बुलवाय किये गुरु करि मिलाप।
निज महल बिच मन्दिर बनाय, ता में पधराये शिर नवाय ॥
राधा--नंदनंदन भक्ति भाव, सीखे प्रताप नृप रचि सुभाव।
कर दिये रघु कुल के गुरु गनेश, साँचे सेवक ह्वै प्रतापेश ॥
तिन गुरु चरनन को योग पाय, दिये सम्प्रदाय चारों बनाय ॥

व्रज निधि श्रीप्रतापसिंहजी के पौत्र श्रीजयसिंहजी (तृतीय) के जन्मोपलक्ष्य में श्रीजी श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज का जयपुर राज्य की ओर से महान् स्मृति महोत्सव सम्पन्न हुआ था, जिसमें राज्य कोष से लाखों रुपयों का व्यय किया गया था। यह थी उन धार्मिक राजाओं की श्रीगुरुचरणों में अपूर्व निष्ठा।

आपश्री द्वारा निर्मित अनेक स्तोत्र हैं, जिनमें कुछ मुद्रित भी हो चुके हैं। जयपुर के संस्थान श्री श्रीजी की मोरी में मन्दिर के ठाकुरजी का नाम श्रीगोपीजनवल्लभजी होने के कारण उनके नाम पर निर्मित श्रीगोपीजनवल्लभाष्टक आप ही की सुमुधर कृति है। आप अपने समय के श्रीमद्भागवत के अद्वितीय विद्वान् थे। आपश्री ने श्रीमद्भागवत पर **सर्वेश्वरी** नामक विस्तृत संस्कृत-व्याख्या की बड़ी ही प्रौढ और अतिमधुर भावपूर्ण रचना की है। कविवरेण्य श्रीमण्डन भट्ट ने अपने **जयशाह सुजस प्रकाश** ग्रन्थ में उक्त व्याख्या (टीका) की चर्चा की है, तथा इसके अतिरिक्त डीडवाना (नागोर) निवासी श्रीशुकदेवजी व्यास के द्वारा भी उपर्युक्त व्याख्या के सम्बन्ध में यह जानकारी मिली कि यह **सर्वेश्वरी** व्याख्या बम्बई में हमारे ही परिकर के महानुभाव के पास हस्तलिखित प्रति विद्यमान है। आचार्यपीठ में उक्त व्याख्या की प्रति उपलब्ध नहीं है। यदि डीडवाना सम्पर्क करके उस प्रति को केनापि प्रकारेण बम्बई से प्राप्त की जाय तो इस दिव्य निधि से सम्प्रदाय एवं आचार्यपीठ का महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित हो सकता है।

प्रायः देखा जाता है कि विद्वत्ता, प्रभुता और भक्ति रूप त्रिवेणी का सङ्गम एक स्थान पर होना सुदुर्लभ है, किन्तु यहाँ तो उपर्युक्त तीनों धारायें समान रूप से निर्बाध प्रवाहित थी । जयपुर के सुप्रसिद्ध महाकवि श्रीरसिकगोविन्दजी आप ही के कृपापात्र थे । कवि लोग निर्भीक हुआ करते हैं । वे आलोचना करने में नहीं डरते । पर आपकी विद्वत्ता पूर्ण सुमधुर शैली से तो वे भी प्रभावित होकर बोल उठे कि मैंने कथा तो और भी कई एक वक्ताओं के मुख से सुनी है, किन्तु मुझे वास्तविकता इन्हीं की कथा में मिली है--वे अपनी कविता में लिखते हैं--

(१)

जनक को ज्ञान, शुकदेव को विराग पूजा-
पृथु की, सुभक्ति चैतन्य भक्त-राज की ।
गोपिन को प्रेम, श्रीगोविन्दजू को माधुराज,
दासता हनू की, राजनीति रघुराज की ॥

सत्य दशरथ कौ, युधिष्ठर को धर्म--धैर्य,
काव्य-बाल्मीकि, जयदेव कवि-राज की ।
नारद की सीख, सनकादिक की साधुताई,
कथा श्रीसर्वेश्वरशरण महाराज की ॥

(२)

देवनि के देव गुरुदेव सर्वेश्वरशरन, भू पर प्रकट अवतार जौन धरतौ ।
श्रीभागोत पुरान पुरुषोत्तम की, ऐसी भाँति कहो कोविद उचरतो ॥
कौन साधु सेतौ जस लेतौ दानदेतो कौन, गोविन्द गरीब को कलंक कैसे हरतौ
छाय जाति मूढता पलाय जाती प्रेम भक्ति,
पातकी अनेक तिन्हें पावन कौन करतौ ॥

(महाकवि रसिक गोविन्द)

आप अपनी प्रखर विद्वत्ता के अतिरिक्त सिद्धि बल सम्पन्न भी थे । आपके समय की अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाओं में श्रीसर्वेश्वर प्रभु से सम्बन्धित एक चमत्कारपूर्ण घटना इस प्रकार है--

एक बार भ्रमण करते हुए एक सिद्ध सन्त श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में भगवान् श्रीसर्वेश्वर राधामाधव एवं आचार्यश्री के दर्शनार्थ आगये । वे सिद्धि सम्पन्न एवं स्वयंपाकी थे । जब उन्होंने भोजन बनाने हेतु सूखा सामान मांगा तो उनकी रुचि अनुसार सभी सामान दे दिया गया । जब उन्हें दूध दिया जाने लगा तो उनका एक छोटा सा लोटा जिसमें केवल एक पाव भर दूध ही समा सकता था, किन्तु दस सेर दूध डालने पर भी पूरा न भरा । इस विचित्र दृश्य को देख स्थानीय अधिकारी व सन्तों ने बड़े विस्मित होकर उक्त घटना की चर्चा करते हुए आचार्यश्री से विनम्रता पूर्वक निवेदन किया । भगवन् ! अब उन सन्त का समाधान किस प्रकार किया जाय। तब श्रीआचार्यचरणों ने प्रमुदित मन हो श्रीसर्वेश्वर प्रभु के अभिषेक के प्रसादी दूध से परिपूर्ण एक चांदी का लोटा प्रदान करते हुये कहा कि जाओ उन सन्त का लौटा अब दूध से भर जायेगा । अपने लौटे की धार भी न टूटेगी । स्थानीय सन्तजन बड़ी उत्सुकता के साथ उन अतिथि सन्त को दूध देने के लिए पहुँचे । आचार्यश्री के निर्देशानुसार हुआ भी ऐसा ही । अभ्यागत सन्त का लौटा पूर्णतः भर गया और आचार्यश्री द्वारा प्रदत्त लौटे से दूध की धार ज्यों की त्यों अविचिछन्न रूप से गिरती रही जिससे मन्दिर का पूरा प्रांगण दूध सञ्चित हो गया । अभ्यागत सन्त इस दृश्य को देख कर विनयानवत होकर श्रीचरण पद धूलि में लुण्ठित होने लगे और बार-बार क्षमा याचना करने लगे । परम दयालु आचार्यपाद ने उन्हें सान्त्वना देते हुये कहा कि आप कोई विचार न करें यह तो पारस्परिक विनोदात्मक विषय है । यह सब उन्हीं श्रीसर्वेश्वर प्रभु की लीला का अनिर्वचनीय प्रभाव है । आपके तप तेज से प्रभावित होकर राजस्थान के अनेक राजा-महाराजा आपके चरणाश्रित हो गये थे । आपने वैष्णव धर्म की महान् जागृति द्वारा संसारासक्त जन समुदाय का महान् कल्याण किया है । **आपका पाटोत्सव पौष कृष्णा ६ (षष्ठी) का है** । आपकी चरणपादुकायें राजस्थान में जयपुर से आगे अलवर राज्य के क्षेत्र में आगर-नागल के मध्य प्रतापगढ से उस ओर १२ किलोमीटर की दूरी पर भव्य सुन्दर दर्शनीय छतरी पर अवस्थित है। रूपनगढ के भाट की प्रामाणिक बही से यह अवगत हुआ कि इसी स्थान पर आपने अपनी इहलीला संवरण की जिसका सभय ज्येष्ठ कृष्ण ८ रविवार वि. सं. १८७० प्रातः ८ बजे । उपर्युक्त छतरी का निर्माण तत्कालीन जयपुर नरेश सवाई जससिंह (तृतीय) ने एवं राजमाता श्रीआनन्दकुमरी भटियानी ने निर्माण कराई, जिसका उल्लेख "जयसाह सुजस प्रकाश" ग्रन्थ में वर्णित है जो परम द्रष्टव्य है।

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



संस्कृत स्तोत्रकार

आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीनिम्बार्कशरणदेवाचार्य

(४३) आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीनिम्बार्कशरणदेवाचार्य

श्रीसर्वेश्वर---वन्दारुं देश--रक्षा--दृढ़-व्रतम् ।
श्रीमन्निम्बार्कशरणदेवाचार्यं-----नतोऽस्म्यहम् ॥

परिचय--

आपका नाम श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा में ४३ वीं संख्या में आता है । वि० सं० १८७० से लेकर वि० सं० १८९७ तक आपश्री आचार्यपीठासीन रहे थे ।

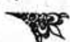
जयपुर महाराजा श्रीजगतसिंहजी के कोई सन्तान नहीं थी । वि० सं० १८७५ में उनका स्वर्गवास हो गया । उनकी एक रानी गर्भवती थी, किन्तु जयपुर राज्य के परिकर के कुछ सामन्तों ने मोहनसिंह नामक एक व्यक्ति के राज्याभिषेक का निश्चय कर लिया । कुछ सामन्तों ने उसको यह कहकर रोका कि रानीजी के प्रसव की प्रतीक्षा की जाय । इस पर दोनों पक्ष सहमत हो गये । महारानी भटियानी श्रीआनन्दकुमारीजी ने श्रीनिम्बार्काचार्य श्री श्रीजी महाराज से प्रार्थना की और उनकी आज्ञानुसार पुत्र प्राप्त्यर्थ श्रीसर्वेश्वर प्रभु की विशेष आराधना आरम्भ कर दी । श्रीस्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के हवन कुण्ड (धूनी) पर हवन करवाया गया । प्रभु कृपा से रानी साहिबा के राजकुमार का जन्म हुआ । उनका नाम जयसिंह (तृतीय) रखा । जयपुर राज्य की समस्त प्रजा में हर्षोल्लास छा गया । एक वर्ष बाद जयपुर राज्य के पूज्य गुरुदेव श्री श्रीजी श्रीसर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज का विशिष्ट-स्मृति महोत्सव (मेला) किया गया । उसमें राज्य की ओर से एक लाख रुपये खर्च हुये । आचार्यपीठ की ओर से भी इतना ही व्यय हुआ । वह मेला (भण्डारा) एक ऐतिहासिक था । घृत के लिये कुण्ड बनवाया गया था । चारों धामों के साधु-सन्तों को आमन्त्रित किया गया था । जयपुर के सुप्रतिष्ठित मण्डन कवि ने इस भण्डारे का विशद वर्णन किया है । उस पुस्तक का नाम है **जय साह सुजस प्रकाश** ।

विक्रम सम्वत् १८७८ में वृन्दावनधाम में एक विशाल मन्दिर की नींव लगी। इकावन हजार घनफुट जमीन पर पाँच वर्ष के सतत परिश्रम से जयपुर के शिल्पियों ने अनुपम मन्दिर का निर्माण किया । उस समय इस मन्दिर की उपमा पाने वाला वृन्दावन में कोई दूसरा मन्दिर नहीं था । रङ्ग मन्दिर, लाला बाबू, टिकारी मन्दिर, शाह विहारी आदि विशाल मन्दिर इसके पश्चात् ही बने हैं । केवल

मदनमोहन, गोविन्द, गोपीनाथ, राधावल्लभ आदि ५-७ ही विशाल प्राचीन मन्दिर थे । किन्तु उनकी आकृति शैली भिन्न थी । जयपुर की राजमाता भटियानी रानी आनन्दकुमारीजी ने अपने गुरुदेव श्री श्रीजी श्रीनिम्बार्कशरणदेवाचार्यजी महाराज के आदेशानुसार यह मन्दिर बनवाकर अपने नाम को भी प्रभु से संलग्न रखने के लिए विक्रम सम्वत् १८३३ ज्येष्ठ शुक्ला ६ को ठाकुर श्रीआनन्दमनोहरवृन्दावनचन्द्रजी महाराज की प्रतिष्ठा समारोह पूर्वक करवाई , पूजा सेवा के लिए तीन ग्राम भेंट किये और श्री श्रीजी महाराज के अर्पित कर दिया । जो कि श्री श्रीजी महाराज की बड़ी कुञ्ज के नाम से प्रसिद्ध है ।

महारानी और स्व० नरेश की कृपापात्र रूपाँ बडारन ने भी इसी के साथ एक छोटा मन्दिर बनवा कर इसी दिवस श्रीरूपमनोहरवृन्दावनचन्द्रजी की प्रतिष्ठा करवाई । मध्य द्वारों पर संगमरमर के सुन्दर हाथी श्रीवृन्दावन के इन्हीं दोनों मन्दिरों में मिलते हैं । आचार्यश्री द्वारा विरचित कुछ फुटकर पद उत्सव संग्रहों में उपलब्ध होते हैं । आपकी प्रौढता विद्वत्ता एवं अपने आराध्य देव श्रीसनकादि संसेव्य भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु के श्रीचरणों में अगाध निष्ठा कैसी थी, यह तो आपके द्वारा निर्मित **श्रीसर्वेश्वर प्रपत्ति-स्तोत्र** से सहज ही विदित हो जाता है ।

भक्ति क्षेत्र सम्बन्धी अनेक चरित्रों के अतिरिक्त स्वदेश की सुरक्षा एवं स्वतन्त्रता पर भी आपश्री की पूर्ण भावना थी । जब ब्रिटिश शासन काल में अंग्रेजों द्वारा भरतपुर पर आक्रमण हुआ था, उस समय आपने अपने प्रिय शिष्य महाराजा श्री भरतपुर की सहायता एवं भरतपुर किला में चतुरचिन्तामणिदेवाचार्य (श्रीनागाजी महाराज) के आराध्यदेव भगवान् श्रीविहारीजी के मन्दिर सुरक्षार्थ ३०० साधुओं की सेना श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ से भरतपुर के धर्मयुद्धार्थ भेजकर भारतीय संस्कृति परम्परा का संपोषण किया । इस प्रकार आपके इस जीवन-चरित्र से सभी को भगवद्भक्ति एवं देश-प्रेम की शुभ--प्रेरणा संप्राप्त होती है । इन आचार्यश्री का उपनाम श्रीनन्दकुमारशरणदेवाचार्य भी था । आपश्री द्वारा जब भरतपुर नरेश को सहायता दी गई तब ब्रिटिश सत्ता ने अजमेर मण्डलस्थ कतिपय ग्राम जो आचार्यपीठ के अधिकार में थे उनको अपने अधीन कर लिये । ऐसी स्थिति में जोधपुर क्षेत्रीय क्षत्रिय सामन्तों ने जोधपुर नरेश के निर्देश पर आचार्यपीठ पर वार्षिक भेट समर्पित करने की व्यवस्था की । इस प्रकार इन आचार्यश्री का जीवन चरित परम उज्ज्वल और गौरवपूर्ण रहा है । आपकी चरण पादुका श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में विद्यमान है । आपका पाटोत्सव ज्येष्ठ शुक्ल ५ (पञ्चमी) का है ।



।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



संस्कृत स्तोत्रकार

आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीव्रजराजशरणदेवाचार्य

(४४) आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीव्रजराजशरणदेवाचार्य

ब्रह्म-जीव-जगत्तत्त्वं सदा सत्यमिति ब्रुवन् ।
श्रीव्रजराजशरणो देवाचार्यो जगद्गुरुः ॥
दययोद्धारयन् जीवानुपदेशामृतैर्भुवि ।
पूज्यो विजयतां नित्यं वन्दारूणां सुरद्रुमः ॥

परिचय--

आचार्यप्रवर श्रीनिम्बार्कशरणदेवाचार्य श्री श्रीजी महाराज के पश्चात् आपके ही परम कृपापात्र श्रीव्रजराजशरणदेवाचार्यजी महाराज ने श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ को सुशोभित किया । वि० सं० १८९७ से लेकर वि० सं० १९०० तक आपश्री आचार्यपीठासीन रहे । आपका अद्भुत वैदुष्य एवं दिव्य प्रभाव से आचार्यपीठ का सर्वतोमुखी विकास हुआ । आपका आविर्भाव राजस्थान में जयपुर से कुछ ही दूरवर्ती सीकर-नगर के क्षेत्र में परम प्रख्यात लोहार्गल तीर्थ के समीप सराय ग्राम में पवित्र गौड़ विप्रकुल में हुआ । आचार्यवर्य श्रीव्रजराजशरणदेवाचार्य श्री श्रीजी महाराज श्रीवृन्दावन, निम्बग्राम, नारदटीला-मथुरा में एवं जयपुर में विशेषतः विराजकर सम्प्रदाय तथा आचार्यपीठ की श्रीवृद्धि की जिसमें आप अग्रगण्य थे । आचार्यश्री के प्रति जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ, बूँदी आदि राज्यों के राजा-महाराजाओं की अपार निष्ठा थी । उनकी सश्रद्ध प्रार्थना पर आपश्री का उनके यहाँ राज-सम्मान राज वैभव के साथ पादार्पण होता रहता था ।

श्रीसनकादि संसेव्य भगवान् श्रीसर्वेश्वर की सेवा सहित आपने अनेक धामों तीर्थों की सुन्दर यात्रायें की । अनेक श्रद्धावान् भगवद्भक्तों के यहाँ पर आपका उनके भक्तिपूर्ण भावना के अनुसार पधारना होता रहता था । श्रीमद्भागवत का नित्य स्वाध्याय और उसके मधुर प्रवचन से भावुक भक्तजन भाव विभोर हो जाते थे । आपके सुन्दर चित्रपट दर्शन एवं उपदेशमयी मङ्गल मुद्रा से जो भाव अभिव्यक्त हो रहा है वह वस्तुतः अद्भुत है, अपने हस्तकमल के अङ्गुष्ठ और तर्जनी अंगुली को संयुक्त कर उपदेशमयी मुद्रा से तथा शेष तीन अङ्गुली जो ऊपर के भाग में दृष्टिगत है जिससे यह स्पष्ट परिलक्षित है--कि ब्रह्म, जीव और जगत् ये तीनों तत्त्व अनन्त, अनादि तथा सत्य है । बह्म स्वतन्त्र है जीव और प्रकृति रूप जगत् ब्रह्म के अधीन

है । ब्रह्म और जीव का सेव्य सेवक भाव ही परमोपादेय है । वस्तुतः आचार्यवर्य का यह दिव्य स्वरूप परम मङ्गलकारी है ।

ये दया के सागर थे और प्रभु के स्मरण को ही सब व्याधियों की औषधि बताया करते थे । चारों ओर निराश होकर मनुष्य इनकी शरण में आया करते थे और इनके पारसतुल्य कर का पावन स्पर्श पाकर कृतार्थ हो जाया करते थे ।

एक दिन एक वैश्य आपके पास आकर उपस्थित हुआ । वह सम्पत्तिशाली होते हुए भी बड़ा दुःखी था । साधु-ब्राह्मणों की सेवा करता था, मन्दिर में दर्शन करने आता था, फिर भी उसका मन बड़ा अशान्त रहता था । सर्वदा हृदय में अशुभ आशङ्काएँ पैदा होती रहती थीं । अनिष्ट की सम्भावनाएँ उसे चारों ओर से घेरे रहती थी । बालक के शिर में वेदना भी हो जाय तो उसे विश्वास होने लगता कि अब यह नहीं बचेगा । दूकान बढा कर आता तो चोरी का भय रहता । बुरे-बुरे स्वप्न और अशुभ शकुन उसकी चिन्ता को और अधिक बढा देते ।

वैद्यों द्वारा चिकित्सा पर भी उसने बहुत-सा धन व्यय किया । ग्रहदशा बताने वाले ज्योतिषियों ने भी उसकी दुर्गति की, किन्तु आशङ्काओं का जोर निरन्तर बढता गया और उसके मस्तिष्क पर भी इसका प्रभाव पड़ने लगा । अन्त में एक महात्मा ने उसे श्री श्रीजी महाराज की शरण में जाने को कहा और वह वहाँ पहुँच गया ।

उसने अपनी व्यथा आचार्यश्री को श्रवण कराई । आचार्यश्री ने कहा--तुम धन से ही सब कुछ खरीदना चाहते हो । प्रभु के निमित्त धन दोगे तो तुम्हें धन प्राप्त होगा, तन दोगे तो शरीर का स्वास्थ्य बढेगा और मन दोगे तो मन शान्त रहेगा । अपने मुँह खाया हुआ ही अंग लगता है । तुम दूसरों से कार्य करवा कर फल स्वयं लेना चाहते हो ।

वैश्य ने कहा--आप जो आज्ञा करेंगे मैं वही करूँगा । आचार्यश्री ने उसे आदेश दिया कि कल से भगवान् श्रीराधामाधवजी के मन्दिर के सामने सोहनी सेवा करके भगवन्नाम की एक माला जप लिया करो । वैश्य ने उसी दिन से यह प्रभु-सेवा और भजन का व्रत धारण कर लिया और उसके मन की अशान्ति और आशङ्काएँ सदा-सर्वदा के लिए मिट गई ।

आपकी भी संस्कृत रचनाओं में **श्रीसर्वेश्वर प्रणति पद्यावली** नामक स्तोत्र बड़ा ही सुललित और भावपूर्ण है । आपका इह लीला संवरण समय विक्रम सम्वत् १९०० है । आपकी चरण पादुका श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में विद्यमान है । पाटोत्सव दिवस ज्येष्ठ शुक्ल ५ (पञ्चमी) का है । *

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य

(४५) आचार्यवर्य--

श्री श्रीजी श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य

सर्वेश्वरार्चना--रूढं शान्तं वैभव-निस्पृहम् ।
श्रीमद्गोपीश्वराचार्यं त्यागमूर्तिं गुरुं नुमः ॥

परिचय--

धर्मनिष्ठ, त्याग तपोमूर्ति, परम निस्पृही, महान् यशस्वी आचार्यपाद श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्य श्री श्रीजी महाराज का जन्म जयपुर मण्डलान्तर्गत हस्तेड़ा नामक ग्राम में गौड़ ब्राह्मण वंश में हुआ था । आप श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ परम्परा में श्रीहंस भगवान् से ४५ वीं संख्या में विद्यमान थे । आपश्री वि० सं० १९०० से लेकर वि० सं० १९२८ तक आचार्यपीठासीन रहे । आपने अपने धर्म पर आये हुए विपरीत वातावरण को देखकर जयपुर की लाखों रुपये की सम्पत्ति का तृणवत् परित्याग कर दिया था ।

आपके समय जयपुर के राज्य सिंहासन पर महाराज सवाई श्रीरामसिंहजी आसीन थे । कुछ समय तक दोनों ओर सभी मर्यादाओं का पूर्ववत् पालन होता रहा। दैव-योग से बक्सीराम नामक एक व्यास (श्री श्रीजी महाराज के अधिकारी श्रीसाधुरामजी का चरवादार) महाराज श्रीरामसिंहजी की सेवा में रख दिया गया । उसके द्वारा कुछ अवैष्णव तान्त्रिकों ने अपने जादू से महाराजा रामसिंहजी को प्रभावित करना आरम्भ किया । थोड़े ही समय में नरेन्द्र की भावना बदली और वे शैव मत के कट्टर पक्षपाती बन गये । परस्पर प्रश्नोत्तर और वाद-विवाद बढ़ने लगा । वि० सं० १९११ के लगभग जयपुर शहर में जिधर देखें उधर यही चर्चा सुनाई देती थी ।

महाराजा श्रीरामसिंहजी जगदीश यात्रा के अवसर पर जब वाराणसी पहुँचे तो वहाँ के मूर्धन्य विशिष्ट-स्मार्त और वैष्णव सभी विद्वानों ने नरेन्द्र को समझाया तथा हस्ताक्षर करके वैष्णव धर्म की सर्वोत्तमता एवं वैदिकता प्रमाणित की, किन्तु फिर भी नरेन्द्र के विचारों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ । दस बारह वर्षों तक उनका हठ उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया । जयपुर की अधिकतर धार्मिक जनता, बहुत से राजपुरुष और समूचा रणवास नरेन्द्र के दुराग्रह से खिन्न था । वैष्णवाचार्यों एवं महन्तों ने एकत्रित होकर अपने कर्तव्य का विचार विमर्श पूर्वक निश्चय किया--

यदि नरेन्द्र दुराग्रह पूर्वक वैष्णव धर्म की अवहेलना करना नहीं छोड़ता है तो सबसे अच्छा उपाय यही होगा **कर्णोंपिधाय निरयात्** इस नीति के अनुसार सभी वैष्णव जयपुर का त्याग कर दें ।

महाराजा श्रीरामसिंहजी श्रीजी मन्दिर में नित्य दर्शनों के लिए आया करते थे । दर्शन नमनादि के अनन्तर वे आचार्यश्री की सन्निधि में बैठकर वार्तालाप भी किया करते थे । एक दिन स्वयं प्रसङ्ग चलाकर आचार्यश्री से प्रार्थना की--आप भस्म और रुद्राक्ष धारण न करें तो कोई बात नहीं, केवल हमारा आप से यही अनुरोध है कि--जब आपकी सेवा में रुद्राक्षादि भेजें जाय तब उन्हें आप अपने कर-कमलों में ले लेवें और अपने यहाँ रखा लेवें, जिससे हमारा राजहठ कृतार्थ हो जाय । चाहे श्रीअङ्ग में धारण न करावें। केवल स्पर्श ही कर लें। बस इतनी ही प्रार्थना है।

आचार्यश्री ने नरेन्द्र को समझाते हुए कहा--राजन् ! रुद्राक्ष और भस्म कोई ऐसी अमेध्य वस्तु नहीं है, जिसका हम स्पर्श भी न कर सकते हों । वस्तुतः भूत-भावन भगवान् शङ्कर की आराधना में वह भी परमोपयोगी पुनीत ही है । जिस-जिस देव की आराधना में जिन-जिन वस्तुओं के उपयोग करने का शास्त्र में विधान मिलता है, उन वस्तुओं का उन्हीं देवों की आराधना में उपयोग करना उचित है । रूपान्तर से इस विषय को ऐसे समझना चाहिये, जैसे-दूध और नमक दोनों वस्तुयें परमोपयोगी और मेध्य वस्तु है, किन्तु इन दोनों का मिश्रण करके उपयोग में ले लिया जाय तो वह मिथ्या आहार-विहार की गणना में आता है और उसका परिणाम विपरीत हो जाता है, यहाँ तक कि भयंकर व्याधि तक का स्वरूप बन जाता है । मिथ्या आहार-विहार के परिणामों की आयुर्वेद से जानकारी कर लेनी चाहिए । भगवान् श्रीविष्णु (श्रीराम-कृष्ण) की आराधना में तुलसी ही का उपयोग होता है, रुद्राक्ष का उपयोग नहीं होता । अतः आपको अपने राजहठ के इतने दुराग्रह पर आरूढ़ नहीं रहना चाहिए । आपका यह राजहठ अनुचित है, किन्तु हमारा धर्म हठ शास्त्र सम्मत होने पर उचित है । यदि हम उससे विचलित होकर आपके दुराग्रह की रक्षा करें तो शास्त्र विरुद्ध होगा, साथ ही समस्त वैष्णव समाज ने आज हमें कर्णधार के रूप में मान रखा है । और हम उनसे वचन-बद्ध हो रहे हैं, ऐसी स्थिति में हम कर्तव्य पालन न करेंगे तो चारों ओर से ही अपकीर्ति सुनाई देगी, अमुक सम्प्रदायाचार्य ने आजीविका के प्रलोभन में धर्म विमुख होकर समाज को धोखा दिया । आपका राजहठ यदि पूर्ण नहीं होता है तो आपकी अपकीर्ति न होकर

चारों और सुयश बढ़ जायगा । जयपुर नरेश महान् धार्मिक हैं, जिन्होंने हठ छोड़कर वैष्णव धर्म की महत्ता को समझा ।

राजन् ! आप यह न समझो कि, आपकी दी हुई जीविका पर ही हम निर्भर हैं, अपितु चारों दिशायें हमारी जागीर है, दुनियाँ में जो कुछ वैभव है, **श्रीसर्वेश्वर प्रभु का ही है,** ये हमारे इष्टदेव जहाँ विराजेंगे, वहाँ ही सब प्रकार से आनन्द--मङ्गल रहेगा ।

महाराजा श्रीरामसिंहजी निरुत्तर होकर अपने राज महल में चले गये । इसी राजहठ के प्रसङ्ग को लेकर वैष्णव चतुः सम्प्रदाय एवं शैव-शाक्तों में ६ मास पर्यन्त शास्त्रार्थ चला । शैवों की ओर से ६४ प्रश्न उपस्थित किये गये जिनका समाधान वैष्णवों की ओर से हुआ । इस शास्त्रार्थ में श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज के परम कृपापात्र शिष्य विद्वद्वरेण्य श्रीनारायणशरणजी ने सर्वाधिक भाग लिया था जो आगे चलकर युवराजकाल में ही गोलोकवासी हो चुके थे । इस शास्त्रार्थ में वैष्णवों की विजय हुई । तथापि महाराजा श्रीरामसिंहजी ने अपना राजहठ यथावत् बनाये रखा । प्रस्तुत संस्कृत में ६४ प्रश्न अद्यावधि आचार्यपीठ (सलेमाबाद) में, रैवासा स्थान जो श्रीरामनन्दीय अग्रदेवपीठ है वहाँ पर एवं पोथीखाना (जयपुर) में भी विद्यमान हैं । उनके चित्त में निरन्तर इसी विषय की चिन्ता बनी रहती थी । विक्रम सम्वत् १९२१ वैशाख शुक्ल १५ को श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज ने नरेश को सूचना दिये बिना ही श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) के लिये प्रस्थान कर दिया । जब ४-५ मील इधर सवारी आई, तब जयपुर नरेश को ज्ञात हुआ । सुना जाता है, उसी क्षण महाराजा श्रीरामसिंहजी घोड़े पर सवार होकर आचार्यश्री को लौटा कर ले आने के लिए एकाकी चल दिये । पीछे से और घुड़ सवार आ गये । नरेश के नेत्रों से अश्रु-धारा बह रही थी । ४-५ मील चलने पर जब आचार्यचरण श्री श्रीजी महाराज के दर्शन न हो सके, तब साथ वालों ने यह कह सुनकर कि अब सवारी बहुत दूर चली गई, आचार्यचरण फिर पधारेंगे । अधिकारी, पुजारी आदि सब मन्दिरों के प्रबन्धक यहाँ ही हैं । श्री श्रीजी महाराज ने अभी जयपुर को एकदम नहीं छोड़ा है । महाराजा श्रीरामसिंहजी लौट आये । एक डेढ़ वर्ष बीत चुका जब आचार्यवर्य जगद्गुरु श्री श्रीजी महाराज लौटकर नहीं आये तब जयपुर नरेश निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) पहुँचे, किन्तु उस समय श्री श्रीजी महाराज जोधपुर राज्य में पधारे हुये थे । अतः दोनों का सम्मेलन नहीं हो सका । शनैः शनैः अधिकारियों को भी जयपुर से निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) बुला लिया गया । इस विवाद में सभी वैष्णवाचार्य एकमत थे । श्रीगोकुलचन्द्रमाजी वाले श्रीगोस्वामीजी

महाराज जयपुर छोड़कर कामवन पधार गये तथा श्रीमदनमोहनजी वाले श्रीगोस्वामीजी करोली । जब नरेश को यह निश्चय ज्ञात हो चुका कि श्री श्रीजी महाराज ने जयपुर का परित्याग कर दिया, तब विक्रम सम्वत् १९२४ में श्री श्रीजी महाराज के मन्दिरों को राज्य के अधीन किया गया ।

जयपुर राज्य की ओर से जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्री श्रीजी महाराज को बुलाने के बहुत कुछ प्रयत्न भी किये गए, किन्तु उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ी । इतनी ग्लानि हो गई थी कि उनके सामने कोई व्यक्ति जयपुर का नाम भी लेता था तो वे सुनना नहीं चाहते थे । वृन्दावन आदि जाने का कभी काम पड़ता भी था तो जयपुर राज्य की सीमा निकलने तक जल-पान नहीं करते थे । जीवन भर इस प्रतिज्ञा का पालन किया ।

उस समय आचार्यपीठ में श्रीसर्वेश्वर प्रभु एवं आचार्यश्री की सेवा में साधु-सन्त और कर्मचारीगण सब मिलाकर तीन सौ के लगभग व्यक्ति थे । आय कम और व्यय बहुत अधिक था । एक दो वर्ष अकाल भी रहा । ऐसी स्थिति में पीसांगण राव राजा साहब ने अपना राज्य श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा के लिये समर्पित कर दिया । जब श्री श्रीजी महाराज ने उनके अर्पित कियें भेंट-पत्र (पट्टे) को पढ़ा तो उन्होंने पीसांगण नरेश को उनकी भक्ति भावना की प्रसंशा करते हुए समझाया । राजन् ! श्रीसर्वेश्वर प्रभु के तो चारों दिशाओं में जागीर है । केवल जयपुर राज्य की जागीर छोड़ देने से उनकी सेवा में कोई विशेष बाधा नहीं पहुँचती । अपना राज्य आप ही के उपयोग में लेते रहें । आपका राज्य परिकर भी श्रीसर्वेश्वर प्रभु का ही परिवार है। उसका भरण पोषण भी श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा ही है ।

आचार्यश्री ने बहुत कुछ समझाया किन्तु जब पीसांगण रावजी ने नहीं माना तब आचार्यश्री ने आज्ञा की, किन्तु लो यह समस्त वैभव भगवत्प्रसादी रूप में हमारे द्वारा दी जा रही है । इसका संचालन करिये और केवल दो सौ रुपये युगलकिशोर श्यामसुन्दर श्रीराधामाधाव भगवान् की सेवा में प्रति वर्ष भिजवाते रहें ।

पीसांगण रावजी ने **गुरोराज्ञा गरीयसी** मानकर आचार्यश्री की आज्ञा शिरोधार्य की और जनतन्त्र राज्य होने तक उसका पूर्ण पालन किया । पीसांगण नरेश की ओर से श्रीसर्वेश्वर प्रभु की जो सेवा हुई है, वह आदर्श एवं अनुकरणीय है। इस कुल के नरेशों की भाँति राज-महिलाओं की भक्ति भावना का भी उच्च आदर्श रहा है । श्रीअनूपकुमारीजी आदि बाइयों की कृति (रचनाओं) से आचार्यपीठ का साहित्य पूर्ण भरा हुआ है ।

पण्डित श्रीकिशोरदासजी एवं बाबा श्रीहंसदासजी आदि लेखक महानुभावों ने **आचार्य परम्परा परिचय** एवं **श्रीनिम्बार्क प्रभा** आदि ग्रन्थों में लिखा है कि अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधिपति श्री श्रीजी श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज ने अपने इस महान् त्याग के द्वारा न केवल श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय का ही, अपितु समस्त वैष्णव समाज का मुख उज्ज्वल कर दिया है ।

आज से लगभग ५० वर्ष पूर्व जयपुर के वयोवृद्ध और विशिष्ट अन्वेषक एवं लेखक पुरोहित श्रीहरिनारायणजी द्वारा भी यह इतिवृत्त श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के अधिकारी पण्डित श्रीव्रजवल्लभशरणजी वेदान्ताचार्य पंचतीर्थ को संप्राप्त हुआ था ।

यह प्रसिद्ध है कि आपके साथ हाथी, घोड़े, रथ, पालकी और ऊँट आदि सवारियाँ और श्रीसर्वेश्वर प्रभु के दुग्धाभिषेक वाली सुरभि (गौ) ये सब सङ्ग चलते थे किन्तु आप इन सब को श्रीसर्वेश्वर प्रभु का वैभव समझकर श्रीसर्वेश्वरजी को गले में धारण करके और हाथी पर भगवान् श्रीराधाकृष्ण की वाङ्मयी मूर्ति श्रीमद्भागवत को विराजमान करके पुष्कर आदि राजस्थान के पुनीत तीर्थस्थलों में स्वयं पैदल यात्रा करते थे । श्रीआचार्यचरणों के तपोमय इस आदर्श से सम्पूर्ण राजस्थान के भक्तजन अत्यन्त श्रद्धा-भाजन बने हुये थे । वास्तव में महाराज मनु द्वारा निर्धारित आचार्य के लक्षणों का प्रत्यक्ष दर्शन होता था ।

इस प्रकार विक्रम सम्वत् १९०१ से वि० सं० १९२८ तक अनादि-वैदिक सद्धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुये आचार्यपदारूढ़ रहकर आपने अनुकरणीय आदर्श की रक्षा करके श्रीनित्यनिकुञ्जविहारी सर्वाधार श्रीराधासर्वेश्वर प्रभु की नित्य लीला में प्रवेश किया । आपकी चरणपादुकायें श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में ही परिसेवित हैं । आपका पाटोत्सव माघ कृष्ण १० (दशमी) को मनाया जाता है।



(४६) आचार्यवर्य--

श्री श्रीजी श्रीघनश्यामशरणदेवाचार्य

हृदि सर्वेश्वरो यस्य करे जपवटी तथा ।
तं घनश्यामशरणदेवाचार्यं हृदाऽऽश्रये ॥

परिचय--

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधिपति श्रीघनश्यामशरणदेवाचार्य श्री श्रीजी महाराज बड़े शान्त, सरल, समदर्शी एवं सौम्य स्वरूप थे। आपका जन्म भी जयपुर मण्डलान्तर्गत हस्तेड़ा नामक ग्राम के उस गौड़ ब्राह्मण परिवार में हुआ था, कि जिस वंश परम्परा में आपके पूज्य गुरुदेव श्रीगोपीश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज का था । इस परम्परा के घर आज भी हस्तेड़ा में विद्यमान हैं । आप विक्रम सम्वत् १९२८ से वि० सं० १९६३ तक आचार्यपीठ पर विराजमान थे । आपके समय में हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी, ऊँट, बैल, गायें आदि सब प्रकार से वैभव का पूर्ण साम्राज्य था ।

आप भगवान् श्रीराधामाधव तथा श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा के अतिरिक्त हरिनामस्मरण एवं जप-साधन में सतत संलग्न रहा करते थे । श्रीमद्भागवत का नित्य स्वाध्याय तथा वैष्णव सेवा आपका प्रधान लक्ष्य था । जोधपुर, बीकानेर, बूँदी आदि राज्य में भी बड़े समारोह पूर्वक आपश्री की पधरावनी तथा कई बार तीर्थाटन आदि के आयोजन भी बड़े ही वैभव पूर्वक होते रहे । आपके वचन में पूर्ण सिद्धि बल था । आपके शुभाशीर्वाद द्वारा कई भक्तों के मनोरथ पूर्ण हुये हैं । यहाँ भगवान् श्रीराधामाधव एवं श्रीसर्वेश्वर प्रभु के दर्शनों के अतिरिक्त इस तपःस्थली में श्रीस्वामीजी (श्रीपरशुरादेवाचार्यजी) महाराज की धूनी की विभूति और नालाजी का जल श्रद्धालुजनों की मनोकामना पूर्ण करते हैं ।

आपके शुभाशीर्वाद द्वारा एक भक्त की वंशवृद्धि की चमत्कार पूर्ण घटना इस प्रकार है--

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) से पश्चिम की ओर दो मील की दूरी पर जंगल में एक मालाराम चाड़ (गूजर) का केवल एक कच्चा घर और

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



आचार्यवर्य श्री श्रीजी श्रीघनश्यामशरणदेवाचार्य

उसके चारों ओर काँटों का बाड़ा था । परिवार में वह और उसकी पत्नी तथा एक विधवा लड़की, ये तीन प्राणी थे । मालाराम चाड़ भेड़-बकरी रखता था । दिन भर जंगल में इधर-उधर उनको चराना यही उसका एकमात्र व्ययसाय था । इसी व्ययसाय में वह धन सम्पन्न भी हो गया । खाने-पीने की कोई कमी नहीं थी, पर उसके सन्तान (पुत्र) न होने के कारण वह सदा चिन्तित रहता था ।

एक दिन की बात है, श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के पण्डित श्रीरामधनजी तथा श्रीलक्ष्मीनारायणजी बोरायड़ा व्यास यजमान वृत्ति करते हुए इधर से आ निकले जहाँ पर वह भेड़-बकरी चरा रहा था । उसने दोनों हाथ जोड़े, उन्होंने आशीष दी। थोड़ी देर वहीं वृक्ष के नीचे बैठ गये । परस्पर कुशल मङ्गल पूछने के पश्चात् प्रसङ्ग चल पड़ा, जिस दुःख से वह दुःखी था ।

इसका समाधान करते हुए दोनों पण्डितों ने कहा--देख तू छुप-छुपकर भगवान् श्रीसर्वेश्वर के जङ्गल सागरमाला में भेड़-बकरी चराता है और लकड़ी भी काट लाता है, कभी दर्शन करना या पाई पैसा भेंट करने का काम नहीं--किसी ने सच ही कहा है--रोपे पेड़ बंबूल का आम कहाँ ते खाय, वही हालत तुम्हारी है । इस पर उसने कहा-बात ठीक ही है, अब आगे ऐसा नहीं होगा, किन्तु मेरी चिन्ता निवृत्ति का कोई उपाय ?

उपाय यही है, आचार्यश्री की पधरावनी कराकर उनका चरण पूजन कर शुभाशीर्वाद प्राप्त कर, भगवान् श्रीसर्वेश्वर की कृपा से सब मनोरथ पूर्ण होंगे, विश्वास दिलाते हुए पण्डितों ने कहा ।

आप लोग भी क्या कह रहे हो ? ऐसे मेरे भाग्य कहाँ जो कि मेरे घर महाराजश्री का पधारना हो, जब कि बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी इस सुअवसर के लिए लालायित रहते हैं ।

दोनों पण्डित बोले तू इसकी चिन्ता मत कर । यदि हृदय में श्रद्धा-प्रेम भावना हो तो सब कुछ हो सकता है, भगवान् शबरी और विदुर के यहाँ भी तो पधारे थे । तेरी भावना हो तो हम महाराजश्री से प्रार्थना करें । मालाराम ने नम्रता पूर्वक कहा--मैं हृदय से चाहता हूँ ऐसी कृपा हो तो कहना ही क्या ? हम तेरी ओर से प्रार्थना करेंगे, ऐसा कह कर दोनों पण्डित आ गए ।

दूसरे दिन जब मन्दिर में दर्शन कर महाराजश्री को पञ्चाङ्ग श्रवण कराने हेतु सेवा में पहुँचे तो श्रीचरणों की प्रसन्न मुद्रा देख निवेदन किया कि सरकार ! आपकी बस्ती ही का एक गूजर मालाराम है, वह पधरावनी कर चरण पूजन करना चाहता है, उसकी भावना है, फिर भगवन् ! विशेष कोई दूर या असुविधा की बात नहीं । नित्य प्रति सरकार का जिधर घूमने जाना होता है, बस वहीं उस सेवक का घर है सो उधर लौटते समय १०--१५ मिनट के लिए कृपा हो जाय । स्वीकृति हो गई । पण्डितों ने उसे सूचना कर दी । उसने निर्देशानुसार तैय्यारी कर ली । निर्धारित समय पर श्रीचरणों का वहाँ पधारना हो गया । मालाराम के हर्ष का पारावार नहीं। पग-पाँवड़ा पूर्वक पधरावनी कर चरण पूजन किया और यथा-शक्ति भेंट की । जब आरती करने लगा तो उसके हाथ काँपने लगे और आँखों से आँसू बहने लगे ।

यह देख कर तत्काल ही परम दयालु महाराजश्री ने कहा क्यों, क्या बात है, ऐसा क्यों ? इस पर दोनों पण्डितों ने तुरन्त सहारा लगाते हुये कहा कि महाराज ! क्या बताया जाय दाल रोटी का तो इसके यहाँ कोई घाटा नहीं, पर इसके कोई सन्तान नहीं, यह एक लड़की है सो भी विधवा । अतः सन्तान न होने से यह दुःखी है और कोई बात नहीं । महाराजश्री ने प्रसन्न मुद्रा में ही कहा अभी कोई इसकी उम्र ज्यादा थोड़े ही हुई है । ३०-४० वर्ष का है, चिन्ता क्यों करता है ? भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु की कृपा हुई तो एक क्या सात पुत्र होंगे । अब तो सभी ने एक साथ भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु की बड़े ही हर्ष के साथ उच्च स्वर से जयघोष की ।

महाराजश्री के शुभाशीर्वाद द्वारा समय पाकर क्रमशः उसके सात ही पुत्र हुये और फिर उन्हीं सातों की सन्तान द्वारा इतनी वंश वृद्धि हुई कि जिस स्थान पर मालाराम चाड़ का घर था उसी स्थान पर आज मोतीपुरा नाम का एक ग्राम बसा हुआ है, जिसमें उसी परिवार के सब घर हैं । भगवत्कृपा से आज भी ये सभी घर धन-जन सम्पन्न हैं । यह ग्राम ही नहीं, इसके अतिरिक्त इसके गाँव से थोड़ी दूर पर इसी वंश के घासी चाड़ की ढाणी भी प्रसिद्ध है । इस वंश की आचार्यपीठ में पूर्ण श्रद्धा है । वर्तमान आचार्यश्रीचरणों की २-३ बार बड़े समारोह पूर्वक पधरावनी की हैं, सहस्त्रों रुपये खर्च कर बावन्नी आदि बड़े-बड़े कार्य सम्पन्न किये हैं, तीन धाम की यात्रा आचार्यश्री के साथ तथा कुम्भ आदि पर्वों पर भी जाते रहे हैं ।

मालाराम चाड़ के सात पुत्र हुये और एक विधवा लड़की थी, उसी क्रमानुसार उसके वंश में, फिर जिस किसी के २-४-५ सन्तान हुई उसकी तो कोई

बात नहीं, पर किसी के सात लड़के हो गये हों, तब तो उनके वही १ बहिन हुई और वह विधवा भी हुई। यह परम्परागत इतिवृत्त हमको अधिकारी श्रीनरहरिदासजी ने सुनाया और साथ ही यह भी कहा कि आज भी घासी चाड़ के ७ लड़के हैं तो उसकी वही एक लड़की विधवा भी है। उस समय की बात का अब भी यह प्रत्यक्ष चमत्कार है।

इसके अतिरिक्त एक बार रिड़ के राठी परिवार ने भी आपश्री की पधरावनी कराई और दस हजार कलदार चान्दी के रुपयों की चबूतरी बनवाकर उस पर आपश्री को विराजमान करके चरण पूजन कर वह धन-राशि भेंट की। उसी धन राशि से आचार्यश्री ने भगवान् श्रीराधामाधवजी के चांदी का विशाल भव्य सिंहासन (बङ्गला) बनवाया जिस पर भगवान् श्रीराधामाधवजी सतत विराजमान हैं।

इसी प्रकार आपके समय पीसाँगण राजाजी ने पुत्र कामना पूर्ण होने पर राजकुमार का चोटी जडुला और राजभोग आदि पीठ में श्रीस्वामीजी महाराज की तपःस्थली में आकर उत्साह पूर्वक अपना मनोरथ सम्पन्न किया था, उनके यहाँ से आया हुआ रथ, पालकी आदि आज भी पीठ में विद्यमान है।

इस प्रकार आचार्य श्रीघनश्यामशरणदेवाचार्यजी महाराज की वाक् सिद्धि द्वारा कितने ही भक्तों के मनोरथ पूर्ण हुये हैं। आपकी चरणपादुकायें आचार्यपीठ में ही विद्यमान हैं। आपका पाटोत्सव आश्विन कृष्ण ६ (षष्ठी) को मनाया जाता है।



(४७) आचार्यवर्य--

श्री श्रीजी श्रीबालकृष्णशरणदेवाचार्य

मन्त्रराजजपादित्य - होमस्वाध्यायसेविनम् ।
रासलीलारसासक्तं भक्तिनिष्ठं तपोधनम् ॥
तं जगद्गुरु-निम्बार्काचार्यपीठाधिराजितम् ।
श्रीबालकृष्णशरणदेवाचार्यं सदाऽऽश्रये ॥

परिचय--

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीबालकृष्णशरण-देवाचार्य श्री श्रीजी महाराज का आविर्भाव विक्रम सम्वत् १९१७ के चैत्र कृष्ण त्रयोदशी सोमवार को जयपुर राज्यान्तर्गत चाकसू तहसील के पूरण की नागल नामक ग्राम में एक परम पावन गौड़ ब्राह्मण वंश में हुआ था । आपके पिताश्री का नाम पं० श्रीगोपालजी शर्मा गौड़ था और माताश्री का नाम श्रीललितादेवी था । विक्रम सम्वत् १९६३ चैत्र कृष्ण द्वादशी सोमवार को ४६ वर्ष की अवस्था में आप श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर सिंहासनारूढ हुये ।

आचार्य प्रवर श्रीबालकृष्णशरणदेवाचार्यजी महाराज का वैदुष्य और सारल्य अनुपम था । श्रुति-स्मृति पुराणादि शास्त्रों, भक्ति परक ग्रन्थों तथा स्वसाम्प्रदायिक-वेदान्त-उपासना ग्रन्थों पर आपका अनुशीलन अनुपम एवं गम्भीर था । श्रीमद्भगवद्-गीता तो आपश्री के कर कमलों से पृथक् ही नहीं होती थी । श्रीसुदर्शन कवच आदि का पठन प्रायः चलता ही रहता था । श्रीगोपालमन्त्रराज का जाप तो प्रतिदिन अनुष्ठान के रूप में दशांश हवन के साथ चलता ही रहता था । सूर्य के प्रखर ताप में सभी ऋतुओं में दैनिक खड़े-खड़े श्रीमन्त्रराज का जाप क्रम एक घन्टे से भी अधिक समय तक सूर्य की ओर बिना पलक गिराये एक दृष्टि रखते हुये किया करते थे । ऐसी कठोर उपासना आपकी यावज्जीवन चलती रही ।

वस्तुतः आपकी शान्ति, कान्ति, दयालुता, गम्भीरता इतनी महनीय थी कि जिसे स्मरण करते ही आज भी प्रत्यक्ष की भाँति अनुभूति होने लगती है । इस प्रकार का महान् गुण-गरिमा पूर्ण जीवन जहाँ तहाँ मिलना दुर्लभ है । आपके परमोच्चतम आदर्शमय जीवन से प्रभावित होकर अनेक शास्त्राचार्यों मनीषीजनों ने आपश्री के शरणापन्न हो शिष्यत्व ग्रहण किया । श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के लब्ध

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर
श्रीबालकृष्णशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी महाराज'

प्रतिष्ठ महामनीषी पण्डित प्रवर श्रीरामप्रतापजी शास्त्री (प्रोफेसर नागपुर) ब्यावर राजस्थान निवासी ने आपश्री से शरणागति प्राप्त कर अपना परम सौभाग्य माना । पं० श्रीलाडिलीशरणजी ब्रह्मचारी न्याय-व्याकरण-काव्यतीर्थ भी आपश्री के ही शिष्य थे जो कि आचार्यपीठ के अधिकारी पद पर भी रहे । जोधपुर के महान् यशस्वी बैरिस्टर श्रीहंसराजजी सिंघवी भी आपश्री ही के कृपा पात्र थे । जोधपुर, बीकानेर, बूँदी आदि उच्चतम स्टेटों (राज्यों) के राजा-महाराजा, राजरानियां, मन्त्रीगण आपश्री के शिष्य प्रशिष्य थे । मारवाड़ के प्राय: सभी जागीरदार आपश्री में परम श्रद्धा रखते हुये शरणापन्न होकर कृतार्थता का अनुभव करते थे ।

इसी प्रकार जब आचार्यश्री का दक्षिण यात्रा में हैदराबाद पधारना हुआ, तब हैदराबाद स्टेट के नबाब ने आपश्री की विराट् शोभायात्रा का आयोजन किया और स्वयं ने भावनायुक्त होकर अपनी श्रद्धा समर्पित की । राजस्थान निवासी सैनिक कमाण्डर श्रीहनुमानसिंहजी राठौड़ ने हैदराबाद की उस शोभायात्रा स्वागत समारोह में अतीव तत्परता से भावनायुक्त होकर अपनी सेवा प्रस्तुत की ।

आपश्री के आचार्यत्व काल में ही अजमेर राज्य के सुप्रसिद्ध ठिकाना खरवा के राव साहब श्रीगोपालहिंजी तथा श्रीमोड़सिंहजी से अजमेर राज्य के तत्कालीन कमिश्नर सा० का सेना सहित इसी आचार्यपीठ में मिलना हुआ था । कारण यह था कि ये दोनों ही सरदार क्रान्तिकारी विचारों के थे और देश को स्वतन्त्र बनाने हेतु अंग्रेजों के विरुद्ध ही प्रच्छन्न रूप से जहाँ-तहाँ रहते हुए अपने कार्य में पूर्ण संलग्न थे ।

ये दोनों सरदार श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ से ही दीक्षित थे । अपने इस गुरुद्वारे में इनकी बड़ी श्रद्धा भावना थी । एक दिन रात में घूमते हुये ये रोहण्डी ठिकाना में कुछ दिवस निवास कर यहाँ आ गये और यहीं रात्रि विश्राम किया । यह देख किसी गुप्तचर ने अजमेर कमिश्नर को सूचना कर दी प्रात: काल होते-होते ही पुलिस एवं फौज के जवानों ने घोड़ों पर चढकर मन्दिर को चारों ओर से घेर लिया । यह स्थिति देख ये दोनों सरदार भी अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र सम्भाल कर लड़ने को तैयार हो गये । जब आचार्यश्री को यह बात ज्ञात हुई तो ऐसा करने से उन्हें निषेध किया और कहा कि ऐसा करने से आपके इस स्थान को भी क्षति पहुँचेगी एवं आपके स्वरूपानुकूल शोभाजनक भी नहीं । आप किसी प्रकार का विचार न करें श्रीसर्वेश्वर भगवान् सब अच्छा ही करेंगे ।

इधर कमिश्नर साहब ने महाराजश्री से पूछकर भीतर आकर उनसे मिलना चाहा । तब महाराजश्री ने कहलवाया कि आप बिना शस्त्र के आवें और ये भी आपसे बिना शस्त्र ही मिलेंगे । इस पर कमिश्नर आये और महाराजश्री के माध्यम से मर्यादानुसार उनसे मिले और बातचीत कर सम्मान पूर्वक उन्हें अजमेर लाकर बाद में खरवा पहुँचा दिया ।

जब आप दोनों सरदार मन्दिर से चलने लगे तो अपने शस्त्राशस्त्र (हथियार) और ऊँट ये सब भगवान् के भेंट कर दिये थे । जिनमें से कुछ हथियार तो वर्तमान आचार्यश्री ने भारत-चीन के युद्धकाल में भारत सरकार के सुरक्षाकोष में जमा कराये थे तथा एक दो आचार्यपीठ में सुरक्षित हैं ।

उदयपुर (मेवाड़) के हिज हाईनेस महाराणा साहब श्रीभोपालसिंहजी भी आपश्री के चरणों में अगाध निष्ठा रखते थे ।

ठिकाना कादेड़ा (अजमेर) के स्वर्गीय ठाकुर साहब का जन्म आपश्री के शुभाशीर्वाद का ही सत्फल था । आचार्यप्रवर की दयालुता इतनी असीम थी कि जिसका वर्णन लेखनी से व्यक्त करना कठिन है । राजस्थान में जब कभी अकाल पड़ जाता था तो श्रीचरण अपने सहज दयालु स्वभाव वश कितनी ही प्रतिकूलता होने पर भी दीनों की, अनाथ-असहायों की अन्न-वस्त्रादि के दान से सहायता करने में बड़े ही आनन्द का अनुभव करते थे । हमारे पीठ के कामदार स्व० श्रीजगदीशचन्द्रजी वैद्य तथा श्रीरामलालजी, श्रीजयनारायणजी जासरावत एवं स्व० श्रीकन्हैयालालजी गौड़, श्रीघासीलालजी गौड़ आदि से सुना है तथा आपश्री की अन्तिम अवस्था के ५-६ वर्षों में देखा भी है, कि काश्तकारों का हासिल जो बकाया चढ़ा रहता उन्हें कामदार लोग बुलाकर वसूल करने के लिए डांट फटकार लगाकर उन्हें रात में बन्द कर देते थे । तो एक-दो रात में जब कभी मौका पाकर वे रात में जाकर महाराजश्री से प्रार्थना करते तब उनको दयावश होकर कहते कि मस्तराम दरवाजे की चाबी लेकर ताला खोलकर इनको चुपचाप बाहर कर आवो, देखना किसी को भी मालूम न पड़े ।

दूसरे दिन उन्हें न पाकर जब कामदार प्रार्थना करने लगते तो आपश्री कह उठते कि उन वेचारों के पास उनके बाल-बच्चों के खाने जितना अन्न भी नहीं है तो तुम्हें कहाँ से देंगे । जब होगा आगे दे देंगे । यह थी आपश्री की स्वाभाविकी दयालुता।

भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु के १०८ तुलसी दलार्पण करना आपका प्रतिदिन का नियम था । कथा, सत्सङ्ग श्रीभगवन्नाम संकीर्तन आदि सत्कार्य आपके आचार्यत्वकाल में प्रतिदिन चलते ही रहते थे । गोशाला, संस्कृत पाठशाला, सन्तसेवा प्रभृति पारमार्थिक कार्य भी आपके संरक्षण में सदा ही चलते रहते थे । विक्रम सम्वत् १९९४ में आपश्री के करकमलों द्वारा ही यहाँ श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना हुई । भगवान् श्रीराधामाधवजी के निज मन्दिर के चाँदी के किंवाड़ों की जोड़ी भी आपश्री के आचार्यत्व काल में ही बनी थी ।

आपश्री का स्वाभाविक सरलता का जितना ही वर्णन किया जाय अत्यल्प है । अजातशत्रुता का आप में प्रत्यक्ष दर्शन होता था । प्रतिकूल आचरण करने वाला भी आपके सम्मुख नत मस्तक हो जाता था । किशनगढ़ नरेश महाराजा श्रीमदनसिंहजी जब भी श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ आते महाराजश्री के मङ्गलमय दर्शन कर अत्यन्त हर्ष का अनुभव करते थे । श्रीचरणों का जब भी परिभ्रमणार्थ प्रातः या अपराह्न में पधारना होता तो महाराज श्रीमदनसिंहजी स्वयं आगे बढ़कर अपने हाथों से श्रीचरणों को पादुका धारण करा कर परम सुखी होते थे । इसी भाँति किशनगढ़ नरेश श्रीयज्ञनारायणसिंहजी महाराज भी आपश्री के पाद पद्मों में अपार श्रद्धा रखते थे । इस प्रकार अगणित विशिष्ट जनों द्वारा परिपूजित थे । आपश्री के आशीर्वाद का प्रत्यक्ष फल मिलता था । अनेक श्रद्धालुजनों ने आपश्री के शुभाशीर्वाद का अनुपम लाभ प्राप्त किया । चारों धाम की यात्रायें एवं श्रीवृन्दावन कुम्भादि पर्वों पर आपका ऐतिहासिक पादार्पण बड़ा ही गौरवपूर्ण रहा है । जो कि उस समय के लिये चित्रों से प्रत्यक्ष अनुभव होता है ।

धर्म प्रचारार्थ अनेक स्थानों पर आपश्री का भ्रमण चलता रहता था, दक्षिण भारत में भी आपश्री का पौष शुक्ल ३ वि० सं० १९६४ से श्रावण कृष्णा १० वि० सं० १९६५ तक लगातार भ्रमण हुआ । यह यात्रा किशनगढ़, मदनगंज, अजमेर, भीलवाड़ा, मन्दसोर, इन्दौर, महू की छावनी, खेडीघाट, ओंकारनाथ, सनावत, भूसावल, जालना, नान्देड़, हैदराबाद, बैजवाड़ा, मद्रास, मदुरा, रामेश्वर धाम, श्रीरङ्गम, त्रिपुती बालाजी, सिकन्दराबाद, परभनी, आसेगाँव, इंगोली, कमरेगाँव, मालेगाँव, पीपल्या, मगरदा, रोलगाँव, खण्डवा, उज्जैन, रतलाम, अजमेर-अरड़का से श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ तक लगभग ६ माह में पूर्ण हुई थी । स्व-सम्प्रदाय की सर्वतोमुखी समुन्नति के लिये आपके विभिन्न महत्वपूर्ण कार्य सम्प्रदाय के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे ।

❊ आपश्री के कतिपय चमत्कारपूर्ण संस्मरण ❊

कई एक चमत्कारपूर्ण घटनाएँ आपश्री की देखने को मिलती हैं--जैसे एक बार श्रीसर्वेश्वर संस्कृत विद्यालय जिसका प्रारम्भ ही हुआ था अभी ५-७ विद्यार्थी ही अध्ययन कर रहे थे, वे भी सबके सब चले गये तब प्रधानाध्यापक श्रीव्रजविहारी-दासजी को बड़ी चिन्ता हुई । उस दिन उन्होंने प्रसाद नहीं पाया । चिन्तित अवस्था में ही अपनें आसन पर लेटे हुये थे । इतने में आचार्यश्री उनके पास पहुँचे और कहा-क्यों चिन्ता कर रहे हो विद्यार्थी गये तो जाने दो और आ जायेंगे । आप सत्य मानिये उसके दूसरे ही दिन और १०-१५ विद्यार्थी आ गये । इस प्रकार कहा जाता है कि आपको वाक् सिद्धि थी ।

एक बार एक सन्त आपके दर्शन करने को आये । पहरेदार ने रोक दिया अभी मिलने का समय नहीं है । वे सन्त वहाँ ही रुके रहे । इस बात को आपश्री स्वत: ही जानकर द्वार पर ही पधार गये और उस सन्त को साथ लेकर अपने पास लाये और बहुत देर तक बात-चीत करके उनको विदा किया ।

एक दिन माघ मास में पुजारी श्रीरघुनाथदासजी ने रात्रि में शयन कराने के पश्चात् भगवान् श्रीराधामाधवजी को रजाई धारण कराना भूल गये । अतः उसी रात्रि में लगभग १२ बजे भगवान् श्रीराधामाधवजी आपश्री को स्वप्न में पधार कर कहने लगे कि आप तो रजाई ओढे सो रहे हो और हम ठंड का अनुभव कर रहे हैं । तब उसी समय आपश्री जगे, महल पार्षद मस्तराम को आवाज दी । श्रीव्रजविहारी-दासजी को जगाकर बुलवाये, पुजारी श्रीरघुनाथदासजी को जगाकर स्नान करवाया व महाराजश्री ने स्वयं पधारकर मन्दिर खुलवाया देखा तो वास्तव में उस दिन पुजारीजी रजाई धारण कराना भूल गये थे । रजाई धारण करा के प्रभु को शयन कराया ।

आपश्री के परमधामवास के एक दो मास पूर्व सेठ श्रीशिवशंकरजी कामदार मेरठ का आपश्री के दर्शनार्थ पीठ में आना हुआ था, उस समय भगवत्सेवार्थ थोड़े चाँवल भी लाये थे । सामने देखकर आपने कहा यह खूब लाये बस यह प्रभु का महाप्रसाद हमारे जीवन में पर्याप्त है । यह सुनकर सेठजी के नेत्रों में आँसू आगये और बोले महाराज ! आप यह क्या कह रहे हैं । तब आपश्री ने कहा बस कह दिया न यह पर्याप्त है अतः आपश्री ने मानों अपने परमधाम वास का कुछ समय पूर्व संकेत भी कर दिया था ।

आज से ६०-६१ वर्ष पूर्व लगभग वि० सं० १९९० के आस-पास की बात है--जबकि अधिकारी श्रीनरहरिदासजी अजमेर रहते थे । एक दिन अजमेर के कई एक भक्तों की पूरी बस भर भगवद्दर्शनार्थ एवं जागरण हेतु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ लाये । इन पंक्तियों का लेखक भी उनके साथ ही आया था । पीठ से दूसरे दिन जब अजमेर के लिए सायंकाल प्रस्थान करने लगे तब आपश्री ने फरमाया कि अभी मत जावो, कल राजभोग होने पर भगवत्प्रसाद लेकर जाना । शीघ्रता में आपकी इच्छा के बिना आज्ञा लेकर प्रस्थान किया । गाड़ी चलकर खातोलीग्राम के पास पहुँची तो अचानक टायर फट गया और तेल भी समाप्त हो गया । ड्राईवर इसके लिए पैदल ही किशनगढ गया । हम लोग रात के १० बजे तक जंगल में ही पड़े रहे । आपश्री के वचनानुसार दूसरे दिन ही अजमेर पहुँचना हुआ, यह थी आपकी वचन सिद्धि । आपके विस्तृत जीवन चरित्र के लिए जीवनवृत्तसौरभ नामक ग्रन्थ द्रष्टव्य है ।

विक्रम संवत् १९९४ में आपश्री के कर कमलों द्वारा ही श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय की संस्थापना हुई थी ।

इस प्रकार आचार्यवर्य ने ८३ वर्ष पर्यन्त इस धरातल को सुशोभित किया और श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ को ३६ वर्ष तक अलंकृत कर वि० सं० २००० के ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा को ऐहिक लीला संवरण कर श्रीसर्वेश्वर--राधामाधव प्रभु के नित्य दिव्य चिन्मय धाम में प्रवेश किया । चरणपादुका आचार्यपीठ के सुरम्य उद्यान (बगीची) में सम्पूजित हैं । आपका पाटोत्सव चैत्र कृष्ण १२ (द्वादशी) को मनाया जाता है ।

(४८) आचार्यवर्य वर्तमान--

श्री श्रीजी श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

कण्ठे सर्वेश्वरो यस्य ह्युपदेशसुधा मुखे ।
शान्तो दान्तो महोदारो लोकानुग्रहकारकः ॥
अधर्मशमनं धर्मरक्षणं भुवि यद्व्रतम् ।
राधासर्वेश्वराख्यं तं शरणं च गुरुं भजे ॥

परिचय--

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वर-शरणदेवाचार्य श्री श्रीजी महाराज का जन्म विक्रम सम्वत् १९८६ वैशाख शुक्ल १ तद्नुसार दिनांक १० मई सन् १९२९ में निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) निवासी गौड़ विप्र वंश में हुआ था । माता का नाम स्वर्णलता (श्रीसोनी बाई) तथा पिता का नाम श्रीरामनाथजी शर्मा गौड़ इन्दोरिया था । प्राक्तन पुण्य कर्मानुसार किसी भाग्यशाली दम्पति को ही ऐसे महापुरुषों को जन्म देने एवं लालन-पालन का सुयोग प्राप्त होता है । जिसमें महापुरुषों का आविर्भाव होता है, वह कुल परम पवित्र है । आपका बाल्यकालीन नाम रतनलाल था । कौन कह सकता था कि यह आगे चलकर एक महान् रत्न सिद्ध होंगे । वि० सं० १९९७ आषाढ़ शुक्ल २ (रथयात्रा) तद्नुसार दिनांक ७ जुलाई सन् १९४० में आपने श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधिपति अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्री श्रीजी श्री बालकृष्णशरणदेवाचार्यजी महाराज के श्रीचरणकमलाश्रित हो विधिवत् वैष्णवी दीक्षा ग्रहण कर उक्त पीठ में ही युवराज पदेन प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की । आपके अध्ययनार्थ विरक्त वैष्णव ब्रह्मचारी पण्डित श्रीलाडिलीशरणजी काव्यतीर्थ को नियुक्त किया गया जो कि बड़े श्री श्रीजी महाराज के ही (कृपापात्र) शिष्य थे ।

वि० सं० २००० में अपने श्रीगुरुदेव के गोलोकस्थ हो जाने पर ज्येष्ठ शुक्ल २ दिनांक ५ जून सन् १९४३ में आप पीठासीन होकर श्रीवृन्दावन व्रजविदेही चतुः-सम्प्रदाय श्रीमहन्त तर्क-तर्कतीर्थ न्याय वेदान्त भूषण श्रीधनञ्जयदासजी (काठिया बाबा) की देख-रेख में सुव्यवस्थित रूप से वि० सं० २००४ अर्थात् सन् १९४८ पर्यन्त मन्दिर श्रीदावानलविहारी, दावानल कुण्ड, श्रीवृन्दावन में ही निवास करते हुये न्याय, व्याकरण-वेदान्त आदि का अध्ययन किया । अध्ययन काल के अवसर

।। श्री राधासर्वेश्वरो जयति।।



अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी महाराज'

में १४ वर्ष की आयु में ही आपने कुरुक्षेत्र में होने वाले अ० भा० साधु सम्मेलन में भाग लेकर सर्वसम्मति से अध्यक्ष पद को समलंकृत किया । उस अवसर पर अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीभारतीकृष्णतीर्थजी महाराज श्रीगोवर्धन-पीठाधीश्वर पुरी का भी पादार्पण हुआ था । उस समय आपको अध्यक्ष पद पर देख कर जगद्गुरु श्रीशंकराचार्यजी ने अपने भाषण में सम्मान पूर्वक इन शब्दों में कहा था कि--आज हमें बड़ा ही गौरव है कि हम अपने साधु समाज के बीच जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यजी को इस बाल्यकालिक स्वल्पावस्था में ही सभापति पद पर देख रहें हैं--आप लोग अवस्था पर कोई विचार न करें--तुलसी पत्र या शालग्राम भगवान् का श्रीविग्रह छोटा या बड़ा, किन्तु उसके महत्व में कोई अन्तर नहीं आता।

इस प्रकार १४ वर्ष की अवस्था से ही आपने निज आराध्यदेव श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा एवं परिकर सहित देश के विभिन्न भागों में परिभ्रमण कर तथा श्रीनिम्बार्काचार्य तीर्थयात्रा स्पेशल ट्रेन द्वारा तीनधाम सप्तपुरी की यात्रा और प्रयाग, हरिद्वार, नासिक तथा उज्जैन आदि स्थानों में कुम्भ पर्वों पर निर्मित श्रीनिम्बार्कनगर द्वारा अखण्ड हरिनाम संकीर्तन श्रीरासलीला, श्रीरामलीला, सन्त-महन्त, विद्वानों के प्रवचन, भजन-संगीत, आदि विविध धार्मिक आयोजनों एवं अपने दिव्य आदेशों-सन्देशों द्वारा भारतीय संस्कृति तथा वैष्णव धर्म की जागृति की है ।

विक्रम सम्वत् २०२६ तदनुसार ई०सन् १९७० के फाल्गुन-चैत्र मास में आपने लगभग तीन हजार भक्तों के साथ श्रीव्रज चौरासी कोसीय पद यात्रा बड़े समारोह के साथ सम्पन्न की । यह यात्रा श्रीवृन्दावन वंशीवट से प्रारम्भ होकर वहीं आकर पूर्ण हुई । यात्रा करने वाले भक्तों का कहना था कि न भूतो न भविष्यति वाली कहावत को चरितार्थ करने वाली ऐसी पद-यात्रा हमने तो नहीं देखी । नगर-नगर, ग्राम-ग्राम में भक्तों का उत्साह, प्रेम तथा उनके द्वारा कृत स्वागत समारोह, शोभायात्रा आदि का दृश्य अपूर्व था ।

आपने श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में वि० सं० २०३१ में अ० भा० विराट् सनातन धर्म सम्मेलन किया जो कि बड़ा ही महत्वपूर्ण था । इसका अनुपम वर्णन विस्तृत रूप में प्रकाशित श्रीसनातन-धर्म-सम्मेलन स्मारिका में द्रष्टव्य है । वि० सं० २०४७ में आपके तत्त्वावधान में युगसन्त श्रीमुरारी बापू की नव दिवसीय श्रीरामकथा का एक महत्वपूर्ण आयोजन हुआ था । विस्तृत विवरण श्रीरामकथा अंक में द्रष्टव्य है । वि०

सं० २०५० में आपश्री के आचार्यपीठाभिषेक के अर्द्धशताब्दी पाटोत्सव स्वर्णजयन्ती महोत्सव के शुभावसर पर अ० भा० विराट् सनातन धर्म सम्मेलन का वृहद् आयोजन हुआ था। जिसका विस्तृत विवरण स्वर्ण जयन्ती स्मारिका में द्रष्टव्य है। वि० सं० २०५३ में युगसन्त श्रीमुरारी बापू द्वारा श्रीव्रजदासी भागवत का विमोचन समारोह भी यहीं आचार्यपीठ में अत्यन्त हर्षोल्लास पूर्वक सम्पन्न हुआ।

इसी प्रकार आपके द्वारा अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में ही श्रीपुरुषोत्तम-मासीय आयोजनों पर श्रीमद्भागवत के अष्टोत्तरशत पाठ पारायण तथा श्रीसुदर्शन-महायाग, श्रीगोपालयाग, श्रीमुकुन्द महायाग एवं श्रीरासलीला, रामलीला, संगीत समारोह भी बड़े समारोह पूर्वक सम्पन्न हुए हैं।

वि० सं० २००० से २०५७ तक के आचार्यत्वकाल में भ्रमण द्वारा सम्प्रदाय का प्रचार-प्रसार ही नहीं अनेक धार्मिक स्थलों का निर्माण एवं जीर्णोद्धार भी आचार्यश्री के करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ है। मदनगंज का भव्य श्रीराधासर्वेश्वर मन्दिर, अजमेर में श्रीनिम्बार्ककोट का भव्य निर्माण, भगवान् श्रीनिम्बार्क तपःस्थली निम्बग्राम में श्रीनिम्बार्क राधाकृष्णविहारीजी का प्राचीन मन्दिर के अतिरिक्त भव्य नूतन मन्दिर, श्रीपुष्करराज स्थित प्राचीन श्रीपरशुरामद्वारा का नवीन रूप द्वारा भव्य मन्दिर का निर्माण, आचार्यपीठ के दोनों विद्यालयों के भवन, सत्संग कथा भवन, राधामाधव गोशाला, यज्ञशाला, औषधालय, श्रीसर्वेश्वर उद्यान, आचार्यकक्ष, छात्रावास भवन, श्रीराधामाधव चौक, श्रीस्वामीजी महाराज की तपःस्थली का नया प्रारूप, आचार्यपञ्चायतन स्थापना, बैंक तथा पोस्ट ऑफिस भवन, गंगासागर पर उद्यान श्रीहनुमान मन्दिर तथा भव्य अतिथि गृह, भव्य गोशाला, श्रीनिम्बार्कतीर्थ सरोवर तथा यमुनासागर की चहार दीवारी व सभा मञ्च का निर्माण, श्रीनिम्बार्कतीर्थ सरोवर पर परकोटा व श्रीनिम्बार्क महादेव मन्दिर का निर्माण, खातोली मोड़ श्रीनिम्बार्कतीर्थद्वार पर श्रीनिम्बार्कमारुति मन्दिर का निर्माण, श्रीनिम्बार्काचार्य राजकीय प्राथमिक विद्यालय भवन का निर्माण कर सरकार को प्रदान, झीटियाँ स्थान का श्रीगोपाल मन्दिर का नव निर्माण, श्रीविजयगोपालजी मन्दिर एवं श्रीनृसिंहजी मन्दिर निम्बार्कतीर्थ का जीर्णोद्धार, श्रीधाम वृन्दावन में श्री श्रीजी बड़ी कुञ्ज, पन्नाबाई वाली कुञ्ज, विहारघाट वाली अति प्राचीन कुञ्ज, राधा-सर्वेश्वरवाटिका, श्रीजी का पक्का बगीचा व अन्य सम्बन्धित कुञ्जों में जीर्णोद्धार व निर्माण, हीरापुरा पावर हाउस के पास निम्बार्कनगर जयपुर में श्रीनिम्बार्कनिकुञ्जविहारीजी के मन्दिर का भव्य नव निर्माण, श्रीगोपालद्वारा किशनगढ़ का जीर्णोद्धार, पण्डरपुर, महू आदि के नव निर्माण सम्बन्धी अनेक कार्य

आपके आचार्यत्व काल में सम्पन्न हुए हैं। सुदर्शनचक्रावतार आद्याचार्य श्रीनिम्बार्क भगवान् के प्राकट्य स्थल महाराष्ट्र में पैठण समीप मुगीं--ग्रामस्थ श्रीगोदावरी के पावन तटवर्ती अरुणाश्रम पर भव्यतम श्रीनिम्बार्क मन्दिर की नव निर्माणाधीन योजना का शुभारम्भ भी सम्प्रदाय के लिये परम गौरवास्पद है।

शिक्षा के क्षेत्र में आपके द्वारा श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, श्रीनिम्बार्क-दर्शन विद्यालय एवं वेद विद्यालय इन तीनों विद्यालयों का संचालन हो रहा है जिसमें विद्याध्ययन कर छात्र अनेक धार्मिक, सामाजिक व शैक्षणिक क्षेत्रों में प्रवेश कर अच्छे प्रतिष्ठित स्थानों पर रह जीविकोपार्जन कर रहे हैं। इन विद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्रों के आवास, भोजन, वस्त्र एवं पुस्तकों आदि का समस्त व्यय आचार्यपीठ वहन करती है।

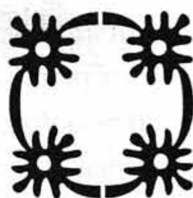
साम्प्रदायिक साहित्य के अभिवर्द्धन में भी आपका योगदान महत्वपूर्ण है। आपके संरक्षकत्व में श्रीसर्वेश्वर प्रेस वृन्दावन में मासिक पत्र श्रीसर्वेश्वर एवं श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) से श्रीनिम्बार्क मुद्रणालय में श्रीनिम्बार्क धार्मिक पाक्षिक पत्र का नियमित प्रकाशन हो रहा है। दोनों पत्रों द्वारा अनेक विशेषांकों का प्रकाशन हुआ है एवं पूर्वाचार्यों द्वारा रचित अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन तथा वर्तमान आचार्यश्री द्वारा रचित अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन भी हुआ है तथा हो भी रहा है।

आचार्यश्री स्वयं संस्कृत, हिन्दी, बंगला एवं राजस्थानी आदि भाषाओं के विद्वान् ही नहीं आयुर्वेद एवं संगीतकला के भी मर्मज्ञ हैं। संस्कृत एवं हिन्दी दोनों भाषाओं में आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। आपके द्वारा विरचित श्रीनिम्बार्क भगवान् कृत प्रातः स्तवराज स्तोत्र पर युग्मतत्त्वप्रकाशिका तथा पंचस्तवी श्रीयुगलगीतिशतकम्, उपदेश दर्शन, श्रीसर्वेश्वर सुधा बिन्दु, श्रीस्तवरत्नाञ्जलिः, श्रीराधामाधवशतकम्, श्रीनिकुञ्ज सौरभम्, हिन्दु संघटन, भारत-भारती-वैभवम्, श्रीयुगलस्तवविंशतिः, श्रीजानकीवल्लभस्तवः, श्रीहनुमन्महाष्टकम्, श्रीनिम्बार्कगोपीजनवल्लभाष्टकम्, भारत-कल्पतरु, श्रीनिम्बार्कस्तवार्चनम्, विवेक-वल्ली , नवनीतसुधा, श्रीसर्वेश्वरशतकम्, श्रीराधाशतकम्, श्रीनिम्बार्कचरितम्, श्रीवृन्दावनसौरभम्, श्रीराधासर्वेश्वर मंजरी, श्रीमाधवप्रपन्नाष्टकम्, छात्र-विवेक-दर्शन, भारत-वीर-गौरव, श्रीराधासर्वेश्वरालोकः, श्रीपरशुराम-स्तवावली, श्रीराधा-राधना, मन्त्रराजभावार्थ-दीपिका आदि-आदि ग्रन्थ परम उपादेय एवं मनन करने योग्य हैं जो धार्मिक एवं भारतीय संस्कृति की विचारधाराओं के ग्रन्थ हैं।

इस प्रकार इस दीर्घकालीन ५५ वर्ष के परिभ्रमण में सहस्रों ही की संख्या में धर्मप्राण जनता ने आपसे शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर आपके दिव्य सदुपदेशों द्वारा अनुपम लाभ प्राप्त किया है ।

इस प्रकार आपश्री के पीठासीन होने के पश्चात् इन ५८ वर्षों में आपके द्वारा आचार्यपीठ की सर्वतोमुखी समुन्नति हुई है, इसमें कोई सन्देह नहीं । आपके द्वारा विरचित साहित्य पर तीन शोध-प्रबन्ध भी शोधकर्ता विद्वानों द्वारा लिखे जा चुके हैं ।

विगत कई वर्षों से शरीर अस्वस्थ रहने पर भी आपका मनोत्साह एवं धर्म-प्रचार कार्य, यात्रा आदि पूर्ववत् ज्यों का त्यों ही चल रहा है, यह आपके संयम-नियम की एक महान् विशेषता है । भगवान् श्रीसर्वेश्वर प्रभु हमारे आचार्यश्री को पूर्ण स्वस्थ रखते हुए उनके द्वारा धार्मिक जगत् को अधिकाधिक आध्यत्मिक लाभ पहुँचावें, यही उनके श्रीचरणों में मङ्गल-कामना है । आपका पाटोत्सव ज्येष्ठ शुक्ल २ (द्वितीया) को मनाया जाता है । जन्मोत्सव वैशाख शुक्ल १ (प्रतिपदा) का है ।



अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में--

 श्रीदेव--दर्शन 

यहाँ के प्रमुख पूज्य अर्चावतार विग्रहों में श्रीसर्वेश्वर (शालग्राम) भगवान् के दिव्य दर्शन मुख्य हैं । इतने सूक्ष्म विग्रहस्वरूप शालग्राम प्रतिमा विश्व में यह एक ही मानी जाती है । ये दिव्य स्वरूप श्रीसनकादि महर्षियों द्वारा परिसेवित हैं । श्रीसनकादिकों एवं देवर्षिवर्य श्रीनारद तथा आद्याचार्य श्रीभगवन्निम्बार्क से लेकर आज तक सभी पूर्वाचार्य इनकी आराधना में निरन्तर संलग्न रहते आये हैं । आचार्यश्री जहाँ भी रहे, श्रीसर्वेश्वर प्रभु साथ ही रहते हैं । विशेष जानकारी के लिए श्रीनिम्बार्क पाक्षिक-पत्र का सन् १९७५ का विशेषाँक श्रीसर्वेश्वर अङ्क देखना चाहिए । यह एक ही ग्रन्थ श्रीसर्वेश्वर प्रभु के सम्बन्ध की समस्त जानकारी एवं शङ्काओं के समाधान के लिए पर्याप्त है ।

भगवान् श्रीराधामाधव--श्रीगोकुलचन्द्रमाजी

आचार्यपीठ में विराजमान श्रीगोकुलचन्द्रमाजी का नामोल्लेख अथर्ववेदीय श्रीगोपालतापिनी के अनुसार है । अष्टादशाक्षर श्रीगोपाल मन्त्र की उपासना को सार्थक करने वाली यह प्राचीन सेव्य प्रतिमा है ।

भगवान् श्रीराधामाधवजी की अद्‌भुत छटा दर्शनीय है । जिस भाग्यशाली (भक्त) को एक बार भी इस सौन्दर्य-माधुर्य-पूर्ण लावण्य भरी प्रतिमा के दर्शनों का सौभाग्य संप्राप्त हो जाता है, तो बस उसके लिये **आँखिन सो यह रूप लख्यो उन आँखिन से अब देखिये का** वाली सदुक्ति पूर्ण चरितार्थ हो जाती है ।

यह श्रीगीत गोविन्दकार रसिक शिरोमणि श्रीजयदेव कवि के सेव्य स्वरूप है । यह विक्रम सम्वत् १८२९ ज्येष्ठ शुक्ल १० (दशमी) को यहाँ पधार कर विराजमान हुये । आपके यहाँ पधारने की अद्‌भुत कथा किशनगढ राज्य की तवारीख (इतिहास विभाग के रिकार्ड) में विशद् रूप से उल्लिखित है । वह संक्षेप में इस प्रकार है--

श्रीजयदेव के परमधाम वास होने पर ४-५ सौ वर्ष बाद यह दिव्य प्रतिमा श्रीराधा कुण्डस्थ ललिताकुण्डवर्ती श्रीललितविहारीजी के मन्दिर में सुशोभित श्रीनिम्बार्क भगवान् के पट्टशिष्य श्री श्रीनिवासाचार्यजी महाराज की बैठक (व्रज मण्डल) में आकर विराजमान हुई । श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीगोविन्दशरण-देवाचार्यजी महाराज को स्वप्न में आपका आदेश मिला कि हमें अपने रथ में बैठाकर आचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) ले चलो । इस आदेशानुसार जब रथ में विराजमान कर आचार्यश्री चले और भरतपुर आकर राजभोग सेवा करने को ठहरे, तब राधाकुण्ड, गोवर्धन आदि के कुछ व्रजवासी जनों ने आकर आचार्यश्री से प्रार्थना की--महाराज ! श्रीमाधव भगवान् को व्रज से न ले जायें । आचार्यश्री ने कहा--इन्हीं की इच्छा है । भरतपुर नरेश तक भी यह चर्चा पहुँचाई । आन्दोलन तेजी से बढने लगा । तब भरतपुर नरेश ने सब व्रजवासियों को आदेश दिया--आप रथ को लौटाकर ले जावो यदि श्रीमाधवजी की इच्छा होगी तो वापिस पधार जायेंगे । आचार्य श्री श्रीजी महाराज को हम राजी कर लेंगे । आये हुये व्रजवासी और बहुत से भरतपुर के निवासी भी जुट गये किन्तु रथ टस से मस नहीं हुआ । चकित होकर जनता बैठ गई । सेवा के पश्चात् जब आचार्यश्री ने प्रार्थना करके रथ के घोड़े लगवाये और खैंचा तो रथ चल पड़ा और यहाँ आ पहुँचा । यही भगवान् श्रीमाधवजी श्रीराधाजी सहित आचार्यपीठ के मध्य (बीच) मन्दिर में विराजमान हैं ।

आचार्य मन्दिर

श्रीराधामाधवजी व **श्रीसर्वेश्वर भगवान्** के बायें उत्तर भाग वाले मन्दिर में **श्रीगोकुलचन्द्रमाजी** एवं **श्रीबाँकेविहारीजी** के दर्शन हैं और दायें (दक्षिण) भाग में आचार्य मन्दिर है, जहाँ **श्रीहँस, श्रीसनकादिक, श्रीनारद, श्रीनिम्बार्क, श्रीनिवासाचार्य** इन आचार्य पंचायतन के सुन्दर दर्शन हैं । श्रीसर्वेश्वर प्रभु मन्दिर से उत्तर में **वेद मन्दिर** हैं, जहाँ चारों वेद एक साथ प्रतिष्ठित हैं । आचार्य मन्दिर से दक्षिण में नीचे उतरने पर **सिद्ध पीठ** के दर्शन हैं, यहाँ आचार्य सिंहासन और श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के चित्रमय इतिवृत्त की झाँकी है । यवन तान्त्रिक स्तब्ध हो रहा है, बादशाह अपने अर्पित किये दुशाला जैसे अग्नि कुण्ड में से निकाले हुए अनेक दुशालों को देखकर चकित है । हवन कुण्ड की भस्म, श्रीसर्वेश्वर प्रभु के

समर्पित तुलसी दल, श्रीनालाजी का जल, श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सर्वेश्वर कुण्ड) की रज, इन चार वस्तुओं को यहाँ से श्रद्धालु भक्त ले जाते हैं। बहुत से भक्त दूर-दूर से विनय पत्र भेजकर मंगवाते हैं। सिद्ध पीठस्थ आचार्य प्रतिमा के पिछवाड़े योग पीठ है, यह निरावरण (खुला) है। यहाँ श्रीस्वामीजी महाराज (श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज) के सुन्दर चित्र के दर्शन पूर्वक सभी भावुकजन पूजा आराधना कर सकते हैं।

१. साधु-सन्तों की पंगत होने के अनन्तर प्रक्षालित जल इसी मन्दिर के नीचे होकर बाहर जाता है, वही नालाजी कहे जाते हैं। भयङ्कर व्याधि से पीड़ित भावुक भक्त श्रद्धा पूर्वक उसका पान करके व्याधिमुक्त होकर स्वस्थ हो जाते हैं।

२. राघोगढ, फतेहगढ, बीकानेर आदि राज्यों के नरेश राजरानी आदि भक्तजनों की इस सम्बन्ध में वि० सं० १६०० तक की वांछित फल प्राप्ति परक चिट्ठियाँ भी आचार्यपीठ में उपलब्ध होती हैं।

* दर्शनीय--स्थल

श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सरोवर)--

यह तीर्थ-स्थल चारों ओर से व्रज की प्राचीन लता-पताओं के सदृश सुशोभित है। यह प्रदेश श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ की स्थापना काल से ही प्रायः सजल और सरस था। बड़े-बूढों का कहना है कि किसी समय तीर्थ के चारों ओर एक सुन्दर उद्यान भी था, जिसमें अनेक प्रकार के फल-पुष्पादि उत्पन्न होकर भगवान् की सेवा में आते थे। यहाँ दश-बारह हाथ जमीन खोदने पर ही जल निकल आता था।

समय की गतिविधि के कारण वि० सं० १६५६ से लेकर वि० सं० २०३१ पर्यन्त मध्यकाल में ऐसी नीरसता का साम्राज्य आया कि जलाभाव के कारण अच्छे-अच्छे कूप-बावड़ियों की शोभा नष्ट हो गई। उत्पादन कम हो गया। व्यापारीगण भी नगर छोड़ कर बाहर जा बसे। वही समय फिर बदला कि अभी सं० २०३१ के

चैत्र कृष्ण ३ से ७ पर्यन्त इसी पीठ में अ० भा० विराट् सनातन धर्म सम्मेलन होने के पश्चात् आने वाले वर्षाकाल में इतनी वर्षा हुई कि श्रीनिम्बार्कतीर्थ के चारों ओर जल ही जल हो गया । श्रीसर्वेश्वर -श्रीराधामाधव भगवान् की कृपा से वही सरसता फिर आ गई । कूप-बावड़ी जल मग्न हो गये । उत्पादन बढ गया । उस समय श्रीनिम्बार्कतीर्थ के चारों ओर नदी-नाले बह रहे थे । श्रीनिम्बार्कतीर्थ ही नहीं, अपितु पूरा राजस्थान ही विहार-बंगालवत् हो गया । भगवान् की लीला बड़ी विचित्र है । निम्बार्कतीर्थ का वर्णन **पद्मपुराण** में सम्यक् प्रकार हुआ है । यहाँ कोलाहल दैत्य का महाविष्णु ने प्रकट होकर वध किया । सूर्य ने निम्बवृक्ष पर आश्रय लिया जिनके प्रखर किरणों से जिस सरोवर का उद्भव हुआ वह निम्बार्कतीर्थ नाम से विख्यात है ।

समाधि स्थल--

सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी के अनन्तर जिन-जिन आचार्यों का यहाँ लीला विस्तार हुआ, उनमें श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज की समाधि पुरानी है । तिजारी एकाँतरा आदि ज्वरों से मुक्त होने के लिए जो इस समाधि का आश्रय लेता है, वह अवश्य रोग मुक्त हो जाता है । इन समाधि स्थलों में आचार्यों के चरण कमलों की पूजा होती है । इन समाधियों के पूजन से श्रद्धालु भक्तजनों की कामनायें भी पूर्ण होती थी और हो भी रही हैं । यहाँ श्रीगणेशजी, श्रीशंकरजी, श्रीहनुमानजी का मन्दिर एवं शिवालय तथा चारों ओर सुरम्य पुष्प वाटिका भी है ।

विशाल वापिका--

नगर में एक विशाल वृहद् वापिका (बावड़ी) है जो सुन्दर पत्थर की बनी हुई है । यह बोहरेजी की बावड़ी है, किन्तु इसमें कहते हैं एक चोर छिप गया था, उसका पता छ-मास तक नहीं लगा, अतः इसे बहुत से ग्रामीण व्यक्ति चोर बावड़ी के नाम से ही कहते हैं । वास्तव में इसके कई खण्ड हैं उनमें विशाल-विशाल कमरे भी हैं, उनमें आकर कोई छुप जाय तो पता नहीं लग सकता । यह विक्रम सम्वत् १७१५ में यहाँ के कुबेर सदृश धनाढ्य ननवाणा बोहरा हृदयराम के द्वारा बनवाई गई थी । शिलालेख में उत्कीर्ण इस प्रकार का दोहा है--

अविचल काम अनूपजल जाति जुजैन जाय ।
प्राझीपति स्याही लगै ब्रह्म हरीची वाय ॥

(सम्वत् १७१५ लिखिंत ब्रौ० हरदौराम)



कोलाहल दैत्य के भय से विल्व वृक्ष पर शंकर, पीपल में विष्णु, शिरीष में इन्द्र, निम्ब–नीम में सूर्य ने सूक्ष्म रुप में आश्रय लिया। महाविष्णु ने प्रकट होकर दैत्य का वध किया जहाँ निम्ब वृक्ष में सूर्य ने निवास किया वही निम्बार्कतीर्थ कहलाया।

भारतीय दर्शनार्थियों के अतिरिक्त विदेशी पर्यटक भी जब यहाँ आते हैं तो इस बावड़ी को देखकर चकित हो जाते हैं ।

पुस्तकालय--

आचार्यपीठ में प्राचीन हस्त लिखित ग्रन्थों का भी विशाल संग्रह है । इस पुस्तकालय में श्रीनारद पंचरात्र आदि बहुत से दुर्लभ ग्रन्थ हैं । महाभारत भागवत आदि विशाल ग्रन्थ तक एक पत्र में उल्लिखित हैं । बहुत से ग्रन्थ अस्त-व्यस्त भी हो गये । भूतपूर्व आचार्यश्री की उदारता एवं दयालुता के कारण बहुत से ग्रन्थों को कई व्यक्ति अस्तव्यस्त एवं इतस्ततः कर गये ।

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

की

* पारमार्थिक संस्थाएँ *

१. **श्रीनिम्बार्क मुद्रणालय**--इस मुद्रणालय में पीठ द्वारा प्रकाशित-श्रीनिम्बार्क धार्मिक पाक्षिक-पत्र का प्रकाशन एवं प्राचीन-अर्वाचीन-निम्बार्क साहित्य का प्रकाशन होता है ।

२. **श्रीनिम्बार्क पाक्षिक-पत्र**--यह पत्र पाक्षिक रूप से अंग्रेजी मास की १ और १५ तारीख को प्रतिपक्ष प्रकाशित होता है । इसके मुख पृष्ठ पर आचार्यश्री के सदुपदेश के अतिरिक्त धार्मिक लेख, श्रीनिम्बार्काचार्यपीठस्थ उत्सव--महोत्सव तथा स्वसाम्प्रदायिक विविध समाचार, कविता एवं जीवनोपयोगी कल्याणकारी सुन्दर सामग्री रहती है । वार्षिक शुल्क ३०) रु० मात्र और आजीवन सदस्य शुल्क ३०१) रु० है ।

३. **श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय**--राजस्थान सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त इस विद्यालय में छात्रों को राजस्थान सरकार बोर्ड द्वारा निर्धारित प्रवेशिका, उपाध्याय एवं शास्त्री आदि परीक्षाओं का अध्यापन कराया जाता है ।

४. **श्रीनिम्बार्क दर्शन विद्यालय**--इस विद्यालय में सभी प्रान्तों के छात्रों को सम्पूर्णानन्द विश्व विद्यालय वाराणसी की प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री एवं आचार्य की परीक्षायें दिलाई जाती है । यह विद्यालय भी उक्त वाराणसी विश्व विद्यालय से मान्यता प्राप्त है ।

५. **श्रीराधासर्वेश्वर छात्रावास**--इस छात्रावास में प्रायः दोनों विद्यालयों के मिलाकर कुल ६० छात्रों के निवास की व्यवस्था है। भोजन, वस्त्र, पुस्तक, आवास, प्रकाश, परीक्षा शुल्क एवं परीक्षा देने हेतु जाने-आने का मार्ग-व्यय पीठ की ओर से ही होता है।

६. **श्रीनिम्बार्क पुस्तकालय**--इस वृहद् प्राचीन पुस्तकालय में लगभग प्रकाशित एवं अप्रकाशित हस्तलिखित पाँच हजार ग्रन्थ हैं।

७. **श्रीहंस वाचनालय**--इस वाचनालय में पीठ द्वारा संचालित श्रीसर्वेश्वर मासिक तथा श्रीनिम्बार्क पाक्षिक पत्र के अतिरिक्त त्रैमासिक, मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक एवं दैनिक समाचार आदि अनेक पत्र-पत्रिकायें आती है। सभी को पढने की बड़ी सुविधा है।

८. **श्रीहरिव्यास औषधालय**--इस औषधालय द्वारा असहाय रोगियों को निःशुल्क औषधि संप्राप्त होती है। इसमें भक्तजन अपना आर्थिक सहयोग भेजकर सेवा का पुण्य प्राप्त करें।

९. **श्रीराधामाधव गोशाला**--इस गोशाला में गायों के आवास की समुचित व्यवस्था है। यहाँ का गो-दुग्ध एवं गोघृत प्रतिदिन भगवत् सेवा कार्य में आता है तथा गोबर खाद के रूप में कृषि-भूमि के उपयोगार्थ लिया जाता है। गोशाला में २०० गो-बछड़े हैं। गो-भक्त महानुभाव आर्थिक सहयोग प्रदान कर गो-गोसेवा का लाभ प्राप्त करें।

१०. **श्रीसर्वेश्वर वेद विद्यालय**--इस विद्यालय में छात्रों को सस्वर वेद पाठ पढाया जाता है। भारत सरकार की ओर से केवल ६ विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति एवं अध्यापक महोदय का वेतन दिया जाता है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों के छात्रवृत्ति, भोजन, आवास आदि की व्यवस्था आचार्यपीठ से होती है। वर्तमान में छात्रों को छात्रवृत्ति एवं अध्यापक के वेतन की व्यवस्था भी आचार्यपीठ से ही सम्पादित की जाती है।

११. **श्रीनिम्बार्क ग्रन्थमाला**--इस ग्रन्थमाला में हिन्दी--संस्कृत भाषा के स्वसम्प्रदाय परिज्ञानार्थ ग्रन्थ प्रकाशित होते हैं। अब तक कई ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। भावुक भक्तजनों को अप्रकाशित अन्य ग्रन्थों के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग प्रदान कर हाथ बटाना चाहिए।

१२. **श्रीराधामाधव स्थायी सेवानिधि**--श्रीराधामाधवजी के दैनिक राजभोग की सेवा में धर्मप्रेमी भावुक भक्तजन एक बार ११०१) रु० प्रदान कर इस

स्थायी सेवा निधि के आजीवन सदस्य बनकर भगवत्सेवा में अपने धन का सदुपयोग करें ।

१३. **श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय स्थायी सेवा निधि**--श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय निर्बाध गति से चलता रहे इसके लिए सुदृढ स्थायी कोष की व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक है। भक्तजन इसमें दश हजार रुपये की सहायता प्रदान कर विद्यादान का पुण्य लाभ प्राप्त करें ।

संलग्न संस्थाएँ--

मुद्रणालय--

१. श्रीसर्वेश्वर प्रेस, प्रताप बाजार, वृन्दावन

विद्यालय तथा छात्रावास--

२. श्रीनिम्बार्क शिशु मन्दिर, वृन्दावन
३. श्रीसर्वेश्वर छात्रावास, वृन्दावन
४. श्रीनिम्बार्क दर्शन विद्यालय, निम्बग्राम
५. श्रीनिम्बार्क छात्रावास, निम्बग्राम
६. श्रीनिम्बार्क औषधालय, निम्बग्राम
७. श्रीनिम्बार्क गोशाला, निम्बग्राम

प्रकाशन--

८. श्रीसर्वेश्वर शोध प्रकाशन, वृन्दावन
९. श्रीसर्वेश्वर मासिक-पत्र, वृन्दावन

सत्सङ्ग प्रचार--

१०. श्रीराधासर्वेश्वर मण्डल, मदनगंज-किशनगढ
११. श्रीनिम्बार्क भजनाश्रम, श्रीपरशुरामद्वारा-श्रीपुष्करराज
१२. श्रीवृन्दावन सत्सङ्ग मण्डल, वृन्दावन

निर्माणाधीन--

१३. श्रीनिम्बार्क प्राकट्य स्थली, मूगीं-पैठण जि० अहमदनगर (महा.)

आचार्यपीठ से सम्वद्ध देव मन्दिर--

१-श्री श्रीजी मन्दिर (कतिपय कुञ्ज, दुकान व बगीचे) प्रताप बाजार, वृन्दावन जि० मथुरा (उ० प्र०) फोन नं० (०५६५) ४४३१५२

२-मन्दिर ठा० श्रीरूपमनोहरजी (बांदीवाली कुञ्ज) प्रताप बाजार, वृन्दावन

३-ठा० श्रीसहजविहारीजी (जीवाराम कुञ्ज) रेतिया बाजार, वृन्दावन

४-ठा० श्रीनागरविहारीजी (नागरीवाली कुञ्ज) सेवा कुञ्ज गली, वृन्दावन

५-ठा० श्रीदानविहारीजी (दानविहारी कुञ्ज) सेवा कुञ्ज गली, वृन्दावन

६-ठा० श्रीकृष्णचन्द्रमाजी (छोटी कुञ्ज) वन खण्डी, वृन्दावन

७-श्रीनिम्बार्क निकेतन (पन्नाबाई कुञ्ज) श्रीबांके विहारी मन्दिर की गली के सामने, वृन्दावन फोन नं० (०५६५) ४४३६३३

८-विहार घाट (समाधि स्थल) परिक्रमा मार्ग, वृन्दावन

९-श्रीराधासर्वेश्वर वाटिका, परिक्रमा मार्ग, टीकारी घाट, यमुना किनारे, वृन्दावन

१०- श्री श्रीजी का बगीचा, परिक्रमा मार्ग--रमणरेती, वृन्दावन

११-ठा० श्रीशान्तिविहारीजी, शान्ति निकेतन--रमणरेती, वृन्दावन

१२-श्रीनिम्बार्क तपःस्थली, निम्बग्राम, वाया-गोवर्धन जि० मथुरा (उ० प्र०) फोन नं० (०५६५) ८१५४२४

१३-श्रीपरशुरामद्वारा, वैरागीपुरा, मथुरा

१४-श्रीनिम्बार्क भवन, चौक बाजार, मथुरा

१५-श्रीभजनदासमठ, श्रीभजनदास चौक, मु० पो० पण्डरपुर जि० शोलापुर (महा०)

१६-श्रीनृसिंह मन्दिर, इतवारी चौक, नागपुर (महा०)

१७-श्रीद्वारकाधीश मन्दिर (श्रीनिम्बार्काश्रम) भीमाकरलेन सब्जी पो० अमरावती (महा०)

१८-श्रीनृसिंह टेकरी, किशनगंज, पो० महू जि० इन्दौर (म० प्र०) फोन नं० (०७३२४) ७४८४४

१९-श्रीगोपालद्वारा, कन्दोई बाजार, त्रिपोलिया, जोधपुर (राज०)

२०-श्रीपरशुरामद्वारा, पो० पुष्करराज जि० अजमेर (राज०) (०१४५) ७७२९११

२१-श्रीगोपालद्वारा, पो० झीटियाँ, वाया-रियाँबड़ी जि० नागोर (राज०)

२२-श्रीराधासर्वेश्वर मन्दिर, डाक बंगले के सामने, मदनगंज-किशनगढ
जि० अजमेर (राज०) (०१४६३) ४३६२८

२३-श्रीगोपालद्वारा, धानमण्डी, पुराना शहर किशनगढ जि० अजमेर (राज०)

२४-श्रीनृसिंह मन्दिर, निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद, जि० अजमेर (राज०)

२५-श्रीविजयगोपालजी मन्दिर, निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद, जि० अजमेर (राज.)

२६-श्रीनिम्बार्कगोपीजनवल्लभ मन्दिर, (श्रीनिम्बार्ककोट) पृथ्वीराज मार्ग
अजमेर (राज०) (०१४५) ४३१३६७

२७- श्रीगोपालद्वारा, करकेड़ी जि० अजमेर (राज०) (०१४९७) २९१९०

२८-श्रीगोपालजी मन्दिर, रूपनगढ जि० अजमेर (राज०)

२९-श्रीजगमोहनजी मन्दिर, रूपनगढ जि० अजमेर (राज०)

३०-श्रीगोपालद्वारा, फतेहगढ जि० अजमेर (राज०)

३१-श्रीनिम्बार्कमारुति मन्दिर, खातोली मोड़, किशनगढ-मकराना मार्ग, मंगलरेड़ी
जि० अजमेर (राज०) फोन नं० (०१४९७) २२५८३

३२-श्रीनिम्बार्कनिकुञ्जविहारी मन्दिर, निम्बार्कनगर, हीरापुरा पावर हाऊस के
पीछे, अजमेर रोड़, जयपुर (राज०) (०१४१) ३५१८९०

३३-श्रीनिम्बार्क प्राकट्य-स्थल, मुगी--पैठण जि० औरंगाबाद (महा०)

३४-श्रीगोपाल मन्दिर, चला, वाया-काऊन्ट टाऊन जि० सीकर (राज०)
फोन नं० (०१५७२) ८७५७२

३५-श्रीदूधाधारी गोपालजी मन्दिर, सांगानेरी गेट, भीलवाड़ा (राज०)
फोन नं० (०१४८२) २९२८८

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के दर्शनीय उत्सव-महोत्सव

१. **अक्षय तृतीया**-इस दिन भगवान् श्रीराधामाधवजी की चन्दन श्रृङ्गार युक्त मनोहर झांकी के दर्शन।

२. **श्रीराधामाधवजी का पाटोत्सव**-भगवान् का मनोहर फूल-बंगला में दर्शन ।

३. **रथ यात्रा महोत्सव**-निज मन्दिर के बाहर जगमोहन में पुजारी- गण एवं आचार्यश्री द्वारा रथों का अनुपम द्रुतगति पूर्वक परिचालन दर्शन।

४. **श्रीगुरु पूर्णिमा**-आज के दिन वृहद् रूप से भक्त समुदाय एकत्रित होकर श्रीआचार्यचरण पूजन करते हैं ।

५. **झूलनोत्सव**-यह उत्सव भी दर्शनीय है, पर आचार्यश्री इस समय श्रीवृन्दावन विराजते हैं ।

६. **श्रीकृष्ण-जयन्ती नन्द-महोत्सव**--यह तो यहाँ का ऐतिहसिक दर्शनीय मुख्य महोत्सव (वृहद् मेला) है, पीठ के संस्थापक श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी का पाटोत्सव भी इसी के अन्तर्गत है ।

७. **श्रीराधाजयन्ती महोत्सव**--यह महोत्सव अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्य-पीठ द्वारा प्रतिष्ठापित एवं सञ्चालित श्रीराधासर्वेश्वर मन्दिर मदनगंज-किशनगढ़ में बड़े ही समारोह पूर्वक प्रतिवर्ष समायोजित होता है ।

८. **श्रीमद्भागवत जयन्ती महोत्सव**--इस उत्सव का सुन्दर आयोजन अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ द्वारा प्रतिष्ठापित एवं सञ्चालित श्रीनिम्बार्क-गोपीजनवल्लभ मन्दिर, निम्बार्ककोट-अजमेर में सम्पादित होता है ।

९. **शरद् पूर्णिमा**-नख-शिख पर्यन्त सुन्दर श्रृङ्गार युक्त श्रीराधामाधवजी की मनोहर झाँकी के दर्शन ।

१०. **विजयादशमी**-सुदर्शनादि समस्त आयुधों की पूजा के साथ २ शमी पूजन एवं मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम की शोभायात्रा।

११. **दीपोत्सव**-दीपमाला की परम मनोहर सुन्दर सजावट।

१२. **अन्नकूट**-श्रीगोवर्धन पूजा एवं विविध मधुर पदार्थ भोग दर्शन ।

१३. **श्रीहंस-सनकादि जयन्ती एवं श्रीसर्वेश्वर-प्राकट्य महोत्सव**--यह दिव्योत्सव श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ एवं पीठ द्वारा प्रतिष्ठापित व संचालित श्रीपरशुरामद्वारा स्थान (पुष्कर) में सम्पन्न होता है। यहाँ उक्त स्थान में भक्तिमती श्रीमीरां बाई के उपास्यदेव श्रीगिरिधरगोपाल भगवान् विराजमान हैं । यहीं पर परमाचार्यवर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के योग समाधि के सुन्दर दर्शन है ।

१४. **श्रीनिम्बार्क जयन्ती महोत्सव**--यह महोत्सव अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ द्वारा प्रतिष्ठापित एवं संचालित श्रीपरशुरामद्वारा स्थान-श्रीपुष्करराज में विविध समारोह पूर्वक प्रतिवर्ष बड़े उल्लास के साथ सम्पादित होता है । इसी प्रकार यह महोत्सव श्रीनिम्बार्कराधाकृष्णविहारी मन्दिर निम्बग्राम एवं श्री श्रीजी बड़ी कुञ्ज वृन्दावन में परमोल्लास के साथ मनाया जाता है ।

१५. **श्रीनिम्बार्क जयन्ती छठी-महोत्सव**--यह पावन महोत्सव अ० भा० श्रीनिम्बा-र्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में नानाविध कार्यक्रमों के साथ प्रतिवर्ष सम्पन्न होता है ।

१६. **फूल-डोल**-फूलों के हिण्डोला में श्रीप्रिया-प्रियतम के दर्शन एवं रंग भरी पिचकारियों की बहार ।

१७. **अधिकमास (श्रीपुरुषोत्तममास)** -प्रत्येक तृतीय वर्ष आने वाले अधिक मास के अवसर पर श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ में अनेकविध यज्ञादि आयोजनों के साथ यह महोत्सव समायोजित होता है ।

१८. **महाकुम्भादि पर्वो पर श्रीनिम्बार्कनगर**--प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन, नासिक, वृन्दावन के महाकुम्भादि पर्वो पर श्रीनिम्बार्क-नगर का भव्य निर्माण होता है । जहाँ श्रीसनकादि महर्षि संसेवित श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा तथा उनके दिव्य दर्शन एवं अखण्ड श्रीभगवन्नाम संकीर्तन, अनुष्ठान,पाठ, कथा-प्रवचन, श्रीरासलीला, श्रीरामलीला, सन्तसेवा, औषधालय, पुस्त-कालय आदि के साथ भक्तजनों की आवास व्यवस्था भी रहती है । लगभग एक मास पर्यन्त यह महोत्सव संचालित रहता है जो अतीव दर्शनीय एवं परमानन्दप्रद होता है ।

उपर्युक्त प्रत्येक महोत्सव जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्री श्रीजी महाराज के पावन सान्निध्य में ही सम्पन्न होते हैं ।

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥  ॥ भगवन् श्री निम्बार्काचार्याय नमः ॥





श्री निम्बार्क ज्ञान कोश

(श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के सिद्धान्त , उपासना , साहित्य,
इतिहास,समाज को देन एवं साधकों की जिज्ञासा समाधान कोश
)

संस्थापना—श्री निम्बार्क जयन्ति वि.स. 2073 तदनुसार

14 नवम्बर 2016

संचालक मण्डल – श्री जयकिशोर शरण जी

श्री हरिदास जी (9997374430)

डा.राधाकान्त वत्स(9268889017)



श्रीनिम्बार्कतीर्थ सरोवर का मनोरम दृश्य



श्रीनिम्बार्काचार्यपीठस्थ पूर्वाचार्यों के समाधिस्थल का अनुपम दर्शन